[Shri B. R. Bhagat]

tion 43 of the Industrial Finance Corporation Act, 1948:—

(i) Notification No. 9/65 published in Gazette of India dated the 23rd October, 1965, making certain further amendment to the General Regulations of the Industrial Finance Corporation of India;

(ii) The Industrial Finance Corporation (Issue and Management of Bonds) Amendment Regulations, 1965, published in Notification No. 10/65 in Gazette of India dated the 23rd October, 1965. [*Placed in Library. See* No. LT-5207/65.]

ANNUAL REPORTS OF INDIAN CENTRAL ARECANUT COMMITTEE (HINDI VERSIONS)

Shri Shahnawaz Khan: I beg to lay on the Table a copy each of Hindi version of the Annual Reports of the Indian Central Arecanut Committee, for the years 1961-62 and 1962-63. [*Placed in Library. See* No. LT-5208/65.]

NOTIFICATIONS UNDER ESSENTIAL COMMODITIES ACT

The Deputy Minister in the Ministry of Food and Agriculture (Shri D. R. Chavan): I beg to lay on the Table a copy each of the following Notifications under sub-section (6) of section 3 of the Essential Commodities Act, 1955:—

(i) The Roller Mills Wheat Products (Price Control) Fifth Order, 1965, published in Notification No. GSR. 1656 in Gazette of India dated the 12th November, 1965;

(ii) The Delhi Roller Mills Wheat Products (Retail Price Control) Amendment Order, 1965 publishid in Notification No. GSR. 1657 in Gazette of India dated the 12th November, 1965. [*Placed in Library. See* No. LT-5209/65.]

12.30 p.m.

RULES COMMITTEE

FIRST REPORT

Shri Krishnamoorthy Rao (Shimoga): I beg to lay on the Table under sub-rule (1) of rule 331 of the Rules of Procedure, the First Report of the Rules Committee.

12.30¼ hrs.

COMMITTEE ON PUBLIC UNDERTAKINGS

TWELFTH REPORT

Shri Subodh Hansda (Jhargram): I beg to present the Twelfth Report of the Committee on Punblic Undertakings on action taken by Government on the recommendations contained in the Twenty-eighth Report of the Estimates Committee on Indian Oil Company Limited (now Indian Oil Corporation Limited).

12.30½ hrs.

PATENTS BILL—*contd.*

Mr. Speaker: The House will now take up further consideration of the motion for reference of the Patents Bill to a Joint Committee, moved on the 22nd November, 1965.

Shri Shree Narayan Das may now continue his speech. He has already taken nine minutes. Out of 5 hours allotted 1 hour and 5 minutes have already been availed of.

श्री श्रीनारायण दास (दरभंगा): अध्यक्ष महोदय, जब पेटन्ट विधेयक तैयार हो गया और माननीय मंत्री महोदय ने उसे लेकर

कमेटी के सुपुर्द करने का प्रस्ताव रक्खा तो उस समय मैं ने कहा था कि पेन्टेट प्रणाली के सम्बन्ध में कानून पास करते समय जिन सिद्धान्तों का ध्यान पूरी तरह से रखना चाहिये उसका मुख्य आधार है जो व्यक्ति विशेष आविष्कारक है किसी वस्तु का उसके स्वार्थ में हो और समाज के हित में हो। जो विधेयक हमारे सामने उपस्थित है उसमें इन सिद्धान्तों का पूरा पूरा समावेश किया गया है। मैंने यह भी कहा था कि हमारे देश में अब तक पेटेन्ट कानून के अन्दर जो काम हुए हैं उनमें बहुत ज्यादा तादाद में विदेशियां द्वारा किये हुए आविष्कारों के पेटेन्ट का ही स्थान है। अभी तक हमारे देश में बहुत बड़ी तादाद में आविष्कारक नहीं हुए है जिन्होंने अपने अधिकारों की रक्षा के लिये पेटेन्ट कानून के अन्दर प्रार्थना पत्र दिये हों। मैंने यह भी कहा था कि आज समय आ गया है कि हम व्यक्ति विशेष आविष्कारक के अधिकार की जहां सुरक्षा करें वहां साथ ही साथ यह भी देखें कि व्यक्ति विशेष के स्वार्थ के संरक्षण के साथ-साथ समाज या देश का हित भी संरक्षित हो।

जैसा कि मैंने अभी बताया, अब तक हमारे देश में जो कानून लागू होता था उसके अन्तर्गत मख्य रूप से विदेशी आविष्कारक आते थे। लेकिन ऐसा समझा जाता है कि जैसे-जैसे हमारे देश में विज्ञान और टैक्नालाजी का प्रसार होता जाएगा और जैसे-जैसे हमार देश में उद्योग धन्धों का प्रसार होगा और जैसे जैसे देश में जो विभिन्न प्रकार की संस्थाएं अनु सन्धान का काम कर रही हैं उनमें अनेकानेक आविष्कार होंगे, जिनसे देश का भी फायदा हो, वैस वैसे हमें इस प्रकार के कानून की अधिकाधिक आवश्यकता होगी। इसीलिए आज एक काम्प्रीहेंसिव बिल हमारे सामने उपस्थित है। इस पर इसी दृष्टि से हमको विचार करना चाहिए।

मैं सदन का ज्यादा वक्त नहीं लेना चाहता हूं। मैं कुछ सझाव देना चाहता हूं जो मेरे दिमाग में इस बिल को पढ़ने से आए हैं। उन सुझावों को मैं इस सदन के सामने विचारार्थ पेश करना चाहता हूं।

सबसे पहले मैं यह कहना चाहता हूं कि संसार में एक इंटरनेशनल कनवेंशन चालू है जिसको बहुत देश अपनाये हुए हैं। इस बिल में मैंने देखा है कि यह जो इंटर-नेशनल कनवेंशन फार दी प्रोटेक्शन आफ इंडस्ट्रियल प्रापर्टी चालू है इसके सम्बन्ध में कुछ ध्यान नहीं दिया गया है। यद्यपि पेटेंट एनक्वायरी कमीशन जो पहले बैठी थी उसने इस बात की सिफारिश की थी, लेकिन जहां तक मेरा खयाल है पीछे जो एन-क्वायरी की गई है उसने इस सिफारिश को नहीं माना है। मैं मंत्री महोदय से जानना चाहूंगा कि इस इंटरनेशनल में भारत क्यों शरीक न हो? ऐसा न करने का क्या कारण है?

दूसरी बात जिसकी तरफ मैं ध्यान खींचना चाहता हूं वह यह है कि इस विधेयक में सरकार ने अपने इस्तैमाल के लिए या देश के फायदे के लिए पेटेंट के अधिकार को लेने का प्राविजन दिया हुआ है और वह अधिकार बहुत व्यापक अधिकार है। बहुत सी हालतों में देश की सरकार को देश के लाभ के लिए यह अधिकार लेना पड़ सकता है लेकिन वह अधिकार मुआवजा देकर लिया जा सकता है, लेकिन वह व्यापक अधिकार है। लेकिन इसमें एक प्रावीजन ऐसा रखा गया है कि जब एसा समय आयेगा कि सरकार किसी पेटेंट के अधिकार को हासिल करे, तो उस समय पेटेंट प्राप्त करने वालों को अधिकार होगा कि वे हाईकोर्ट में जाकर उसकी अपील कर सकते हैं। मैं समझता हूं कि एक अच्छा प्रावीजन है जो इसमें रहना चाहिए।

दूसरी एक बात है जिसकी सफाई मैं चाहता हूं कहा गया है कि एटामिक एनरजी के सम्बन्ध में जो भी आविष्कार होंगे उनको पेटेंट के अन्तर्गत पेटेंट नहीं कराया जा सकता।

[श्री श्रीनारायण दास]

मैं ने एटामिक एनरजी ऐक्ट को नहीं देखा है इसलिए मुझे यह चीज नहीं मालूम। लेकिन मैं यह सफाई चाहता हूं कि यदि कोई एटामिक वैपन्स का आविष्कार करे तो वह आविष्कार पेटेंटेबिल होगा या नहीं।

उद्योग तथा संभरण मंत्रालय में भारी इंजीनीयरिंग तथा उद्योग मंत्री (श्री त्रि० ना० सिंह) : नहीं।

The Deputy Minister in the Ministry of Health (Shri P. S. Naskar): There is no patent for atmoic bomb. There is patent for life-saving drugs.

श्री श्रीनारायण दास : मेरा खयाल है कि एटामिक इनरजी के सम्बन्ध में अब तक जो काम हुआ है वह पेटेंटेबिल न हो, लेकिन अगर कोई एटामिक वैपन्स का मैन्युफैक्चर करता है तो उसके रहस्य को पेटेंट किया जा सकता है या नहीं इसकी सफाई होनी चाहिए।

दूसरी बात इसके सम्बन्ध में मैं यह कहना चाहता हूं कि दफा २९ में यह दिया हुआ है कि जब कोई आवेदन पत्र पेटेंट के लिए दिया जाएगा तो 1912 तक जो कुछ भी उस चीज के सम्बन्ध में किया गया है उसका संरक्षण किया जाएगा। मैं नहीं समझता कि 1912 से क्या तात्पर्य है। मैं तो समझता हूं कि जबसे संसार में साइंस और टेकनालाजी का जन्म हुआ है तब से अब तक देश में या विदेश में जो भी आविष्कार हुए होंगे अगर उनको कोई नया रूप देकर पेटेंट लेना चाहे तो उसको यह अधिकार नहीं मिल सकता। इसलिए मैं समझता हूं कि इसमें 1912 का जिक्र न हो। जहां तक उस चीज के सम्बन्ध में सूचना प्राप्त हो देखा जाय और उसके बाद ही किसी आविष्कारक को पेटेंट का अधिकार दिया जाए।

एक और बात जिसकी तरफ मैं ध्यान खींचना चाहता हूं वह है पेटेंट ऐजेंट के सम्बन्ध में। पेटेंट एजेंट का एक रजिस्टर रखा जाएगा। उसमें उन लोगों के नाम दर्ज किए जाएंगें जिनको इसके सम्बन्ध के केसेज में कंट्रोलर के सामने पैरवी करने का अधिकार होगा। इस विधेयक में सरकार उस रजिस्टर में से किसी एजेंट का नाम निकालने का अधिकार ले रही है। मैं यह नहीं कहता कि सरकार यह अधिकार न ले, लेकिन मैं जानना चाहता हूं कि इस प्रकार किसी एजेंट का नाम रजिस्टर से निकालने के विरुद्ध कोई अपील की जा सकती है या नहीं। पेटेंट के रजिस्टर से नाम हटाने का जो सरकार का निर्णय हो उसकी अपील करने का अधिकार उस व्यक्ति को मिलना चाहिए।

इसके साथ-साथ क्लाज 66 के बारे में मैं कहना चाहता हूं कि इसमें दिया हुआ है कि किसी भी पेटेंट को रद्द करने का अधिकार सरकार को होगा। जब सरकार देखेगी कि कोई पेटेंट का दुरुपयोग कर रहा है और और यह काम देश हित के विरुद्ध जाता है, तो उस हालत में सरकार को किसी भी पेटेंट को रद्द करने का अधिकार होगा। मैं समझता हूं कि ऐसा अधिकार सरकार को होना चाहिए, लेकिन साथ ही साथ उसकी अपील की भी गुंजाइश होनी चाहिए ताकि किसी व्यक्ति विशेष को उसके जायज अधिकार से वंचित न किया जा सके।

यह कानून प्रवर समिति को भेजा जा रहा है। उसको यह देखना होगा कि इस कानून के अन्दर कोई ऐसी धारा न रह जाए जिससे व्यक्ति विशेष या आविष्कारक विशेष अपने अधिकार का दुरुपयोग करके देश को और समाज को हानि पहुंचावे। दूसरी बात यह भी होनी चाहिए कि ऐसी भी व्यवस्था न हो कि नाजायज तौर पर व्यक्ति विशेष, जिसने समाज के कल्याण के लिये या अपने स्वार्थ

के लिए ही अच्छा आविष्कार किया है, उसके लाभ से वंचित कर दिया जाए। इन सब बातों का खयाल करके मैं समझता हूं कि इस विधेयक को हमें प्रवर समिति को विचारार्थ भेजना चाहिए ।

एक बात और मैं इस के सम्बन्ध में कहना चाहता हूं । यह जो विस्तृत विधेयक हमारे सामने प्रस्तुत है इसकी जितनी धाराएं हैं मैं समझता हूं कि वे सब उपयोगी धाराएं हैं, लेकिन ये सब तभी सार्थक हो सकती हैं जब हमारे पेटेंट का काम करने वाला जो विभाग हो वह सारी तरह से सुसज्जित हो और सारी तरह से योग्य हो। इसमें काम करने वाले अच्छे से अच्छे और योग्य से योग्य वैज्ञानिक रखे जाएं। इन लोगों का उत्तरदायित्व बहुत व्यापक है । कानून बनाना आवश्यक है, लेकिन कानून बनाने के साथ-साथ उसको चलाने का काम जिस संगठन पर हो वह योग्य और सक्षम हो इसका भी खयाल रखा जाना चाहिए । मैं उम्मीद करूंगा कि अभी जो हमारा पेटट विभाग है जो अभी तक इस काम को चलाता रहा है उसे इस कानून को चलाने के लिए और मजबूत और व्यापक करना होगा जिससे यह काम अच्छे प्रकार हो सके ।

इन शब्दों के साथ मंत्री महोदय ने जो इस विधेयक को प्रवर समिति को सौंपने का संकल्प किया है उसका मैं हृदय से समर्थन करता हूं ।

Shri N. C. Chatterjee (Burdwan): Mr. Speaker, Sir, anyone who had anything to do with the administration of patent law in this country must admit that our law which was enacted in the year 1911 was archaic and anti-deluvian and needed comprehensive change. Therefore, the hon. Minister has done well in introducing this Bill. As a matter of fact, if I remember rightly, this Bill to thoroughly reorganise or amend the Patent Act of 1911 was introduced in the Lok Sabha in the year 1953 after some recommendations were received from a committee which was appointed to make recommendations. Unfortunately, that Bill was not proceeded with, I do not remember why, and in 1957 it lapsed with the dissolution of the First Lok Sabha. Therefore, I think my hon. friend Shri Dandeker was too hard on the Minister when he categorically castigated him for introducing a measure of this kind.

A measure of this kind is absolutely essential, although there are certain blots, certain unsatisfactory provisions which would retard the objective of this Bill. Therefore, I will point them out, but I do maintain that the main purpose is development and exploitation of new inventions, and also to stimulate Indian progress. Anyone who knows anything about the working of this patent law in India will realise that 90 per cent of the patents are really held by foreign nationals. Therefore, Indians hold only about 10 per cent, and therefore it was high time that we did something to stumulate inventions among Indians. How is this to be done, how far will this Bill encourage the development and exploitation of new inventions from the Indian point of view and stimulate Indian progress? That is the main thing.

There are certain provisions in the Bill. I am offering constructive criticism with a view to help the Minister, the Select Committee and this House. I am pointing out certain provisions which will not stimulate inventions among Indians, which may retard and act as disincentive, which will discourage inventions and will therefore arrest our industrial progress.

The most fantastic provision in the Bill is Clause 5, and I would ask the Minister to seriously think over it, and the Select Committee to amend it. Secondly, I would say that there is another peculiar provision which is very unsatisfactory by which Government is vested with the power to use or acquire any patent without any reasonable compensation. It is almost

[Shri N. C. Chatterjee]

like expropriation without compensation, legal freebootery, and I am sure that this kind of provision kept on the statute-book will be declared as unconstitutional. This is certainly opposed to the Indian constitution. Every one has got certain basic fundamental rights, which even Parliament cannot negative, and I am afraid this is couched in such language that it may be struck down as repugnant to the basic rights conferred by the Constitution.

Clause 5 is a very important clause, under which inventions in respect of claims for substances are not tenable, but only claims for the methods or processes. I do not know whose brainwave this is. Sri Justice Rajagopala Ayyangar, who was a Judge of the Madras High Court and a distinguished Judge of the Supreme Court, so far as I remember, never recommended any such thing in his report, on the basis of which this Bill is being framed. Clause 5 says:

"In the case of inventions—

(a) claiming substances intended for use, or capable of being used, as food or as medicine or drug, or

(b) relating to substances prepared or produced by chemical processes (including alloys....

no patent shall be granted in respect of claims for the substances themselves...."

Clamis only for methods or processes can be entertained. I am submitting that whoever is responsible for this is not doing any good to India. That means that you will have practically no patent, no monopoly, no right conferred on the man whose inventive, scientific faculty, has produced something which is useful for tackling diseases and other elements.

Shri T. N. Singh: I would invite hon. Member's attention to page 16 of Shri Rajagopala Ayyangar's Report, paras 33, 34 etc., in which he has himself made a distinction between processes and substances.

Shri N. C. Chatterjee: I am pointing out that so far as I know in the USA there is no such distinction, protection is given to products even in these cases. In the UK there is no such distinction. In the French law on patents there is no such distinction. I have also had it verified that in the patent law of Ireland there is no such distinction. I am asking the Minister carefully to consider this. What is the good of patenting only methods or processes? In the case of infringement, you will never be able to get at the man who is responsible for the infringement. Processes can be discovered only in exceptional cases, and I submit that if you do not allow patents for substances, you will really make the patent law nugatory, and it will not stimulate research for new products. In the case of food and other things practically you give no protection on behalf of the State. Proof of violation of processes is very difficult to establish in a court of law, and therefore I am submitting that this thing should be revised. There should not be this artificial distinction made. It may be that in times of famine etc., you may suspend the patent law for some period, but you should not put on the statute-book a general law where you say there should not be any patent for substances but only for processes or methods. From the practical point of view, it is making the law nugatory.

The second Clause to which I want to draw attention is Clause 53, which reads:

"(1) Subject to the provisions of this Act, the term of every patent granted after the commencement of this Act shall—

(a) in respect of an invention claiming the method or process of manufacture of a substance, where the substance is intended for use, or

is capable of being used, as food or as a medicine or drug, be ten years from the date of the patent; and

(b) in respect of any other invention, be fourteen years from the date of the patent."

I do not know any country in the world except two countries which have got any law making this artificial distinction, and those two countries are Nicaragua and Venezuela. I do not know why the Minister is running to Nicaragua and Venezuela and putting in a clause like this. In Ceylon, Trinidad and South Africa they have made the law 14 years, and they have also got a provision for extending the period for 7 to 14 years. Therefore, I am submitting that this sort of artificial distinction should not be made. This will act as disincentive, a deterrent, and therefore you should not make this distinction as in sub-clauses (a) and (b).

Already you are cutting it down from 16 to 14 years. If all other civilised countries in the world can function with practically the same term of patent for all kinds of things, why do you make any distinction like this?

The last clause is the clause which gives the Government the power really to appropriate any patent or nullify any patent when it is said to be for its own use. The language, "for its own use" is very extensive. It is not only for the use of any particular defence purpose, but also for all purposes, it is even extended to all Government undertakings.

Shri P. S. Naskar: Public purposes.

Shri N. C. Chatterjee: All Government undertakings. "Own use" is very wide, and therefore I submit that this will mean practically expropriation, and as this will apply to all Government undertakings, the patent law is practically nullified. If it is for your own use, you can say that you ignore the patent law, you can appropriate it, you can misappropriate it, you can use it for any purpose. What is the good of giving a patent then?

What is a patent? According to the latest report published by the United Nations on the role of patents in the development of technology in developing countries,

"The grant of the patent privilege has been based on two primary legal and social justifications. The first is that patents are private property, the inventor has the exclusive right to his invention and the patent law recognises that right."

If you say that for your own use you will appropriate, that really is confiscation of private property, deprivation of private property, that is a denial of the exclusive right which the inventor has in the invention.

The other is,—I am reading the United Nations report—

"The other is exclusive privileges for a limited term of years granted by the Government in the public interest to encourage research and invention, to induce the investors to disclose their discoveries instead of keeping them as trade secrets and to promote economic development by providing an incentive for the investment of capital in new lines of production. It is on this latter rationale that many patent systems chiefly rely."

That is the rationale according to this report which is prepared especially for undeveloped or developing countries. So, I am submitting this will not induce inventions. If you enact this kind of legislation, it will not encourage research, it will not stimulate any further invention, it will not induce inventors to disclose.

[Shri N. C. Chatterjee]

As a matter of fact, this means nothing but naked confiscation, and this sort of wide power should not be given. That is my submission.

Therefore, on three points I am asking the Minister and the Select Committee to consider the matter. What is the absolute necessity for making an artificial distinction between patents for substances and patents for processes as in Clause 5? Is there any necessity for making differentiation in the term, making it 14 years in one case and 10 years in another? Anybody who has got any practical knowledge of these things knows that even if you keep 14 or 16 years, there must be a time-lag between the time of patenting and its commercial exploitation. Supposing it takes five or six years, practically those six years are gone when you cannot earn anything, when you cannot put your scientific knowledge or invention to commercial use. Therefore, you get only three or four years. That will not be fair, that will not be proper.

Therefore, my submission to the Minister is this. First, do not make any artifical distinction in Clause 5. Secondly, do not have a naked policy of expropriation, which will be practically legal freebootery, some kind of confiscation which is not premissible under the Indian Constitution. We have never allowed any expropriation of property without payment of compensation. Even when we changed the law with regard to land reforms, jagirdari abolition and so on, we enacted certain safeguards for payment of compensation, about the formulation of the principle of compensation, but here it is naked confiscation. Thirdly, I submit that it should be made more objective in the sense that they should make them more practical from the point of view of the objects enumerated. We should do nothing which will discourage invention and I am afraid we have this kind of Bill which will practically paralyse all foreign collaboration in India, and that is a very, very important thing. I would ask the Minister if he has at all taken that aspect into account. You will not have proper foreign collaboration operating in India if we have this kind of Bill because they will realise that there will be no real guarantee, no legal guarantee for their discoveries and their products.

Shri Indrajit Gupta (Calcutta South West): Mr. Speaker, Sir, if one examines this Bill in its proper context, that is to say, the fact that it is being brought forward as a comprehensive amending legislation in a country like India, then, I am constrained to say that this Bill is really a gigantic hoax which is being perpetrated upon this country. I have been listening to the speeches made by my hon. friends Shri Chatterjee, and yesterday by Shri Dandeker. They tried their best to wax indignant but they could not, with all the best will in the world. The voice of the Federation of Indian Chambers of Commerce and Industry which has recently submitted a memorandum on the Bill to the Government speaks through Shri Dandeker's arguments and also finds an echo in Shri Chatterjee's arguments; in the ranks of the Federation, I have found almost all the big foreign patent-holders' collaborators, who are in this country.

I am surprised to hear Shri Chatterjee just now asking the Minister whether he had at all taken into consideration the question of foreign collaboration and the impact this Bill is likely to have on it. I would rather say that the interest of foreign collaboration is practically the only thing which has been taken into consideration; and it is under the pressure of those foreign patent-holders who have been looting and exploiting this country under the shelter of the existing patent law of 1911, it is under their

pressure that this mutilated, emasculated, eroded piece of legislation is now brought forward before this House. A very interesting piece of shadow-boxing takes place between the Minister on the one side and Shri Dandeker and Shri Chatterjee on the other, to give us the impression that something very drastic and very revolutionary is being put on the Statute-Book.

Shri P. S. Naskar: You are the referee?

Mr. Speaker: He is now the real fighter.

Shri Indrajit Gupta: This Bill seeks to replace the Bill of 1911, a Bill which was enacted at that time purely for the purpose of safeguarding foreign interests in what was at that time their colony. Today, it is not only a question of the country being independent; it is also a question of a country which is under-developed, struggling to develop its own indigenous national industries and also a country which today, in the context of the recent events on our borders, has got to struggle to be self-reliant. It is in this context that this Bill has to be examined and in no other context; otherwise, national interests have no meaning.

Now, the Minister yesterday made some reference to the relations between the provisions of this Bill and the recommendations made by Mr. Justice Rajagopala Ayyangar, but he did not tell us what was the difference or the similarity in the basic provisions of this Bill as is now being introduced in the House, and the earlier

12.59 hrs.

[MR. DEPUTY-SPEAKER *in the Chair*]

draft, which everybody knows had been prepared a considerable time ago, and was being discussed inside the Government and perhaps in other circles also, the earlier draft whose introduction has been postponed time and again. I do not know if the Minister sitting opposite me will admit it or not—we know very well, and the country knows it, that there were very sharp differences in the preparation of that draft between the Ministry of Industry and the Ministry of Health; it is very natural. And those differences are now sought to be reconciled, shall I say, in the interests primarily of these foreign patent-holders who hold today 90 to 95 per cent of the patents which are operating in this country, which are held by foreigners.

13 hrs.

I shall, for the purpose of illustration, confine myself for the time being to some cases of these medicines or life-saving drugs or food, because there is a special place allotted to them in this Bill and quite rightly so. It was in December last, I think, when we were all rather disturbed to read in the newspapers that our Prime Minister, who was at that time on a visit to the United Kingdom, was met in London or approached in London by the representatives of some of the big British pharmaceutical concerns, and the press reported that the Chairman of one of these major pharmaceutical concerns in Britain asked Prime Minister Shastri whether he could comment on rumours about changes in the patent law, and Mr. Shastri is reported in the press as having said in reply: "If the questioner is happy with the present regulations, he can relax because that is how things will remain." A lot of adverse comment appeared in a section of the Indian press, the national press; no contradiction was made,—that I am aware of—that this was a misrepresentation of what the Prime Minister had said casually, I suppose, in London. But my contention is this: I do charge this government that they have watered down the original draft of this Bill under the pressure of these foreign patent-holders and, particularly, the powerful organisations of these pharmaceutical and drug manufacturers who are operating in this country

[Shri Indrajit Gupta]

sometimes under the name of PAMDAL—the Minister, I am sure, knows the name of that organisation—and other organisations called OPPI who are sending their literature to us also, sometimes by book post, and that is how we come to know. Several lakhs of rupees have been spent over the last several months on a high-powered, concentrated campaign against any kind of amendment to the existing patent law.

I do not wish to take up the arguments advanced by Shri Dandeker and Shri Chatterjee because their arguments boil down to one simple thing, and that is, that there should be no change of patent protection, both for products and processing, and they must be allowed to continue—the old familiar, hackneyed arguments—and if this thing is done, then the sacred right of private property is violated, that principle is violated; that is their first point; though nothing is said about the sacred right of being allowed to rob the poor, under-developed countries and their consumers for the last 50 to 60 years. Secondly, that foreign collaborators will get shy and not want to come; thirdly, that if the Patent Law is watered down or removed or eroded in any way, there will be no incentive for research and for invention. These are all old arguments. I want to know this from the Government—let them tell us on the floor of this House—that under the shelter of this existing law, (they have given over-protection, I would say, complete protection, for too long), I want to know, under the shelter of this patent law, what has been the development of research and invention by these patent-holders in this country? Even today, in the whole range of sulpha drugs, these big firms which are making sulpha products here, they are importing almost their entire supplies of basic raw material, drugs, from abroad. In all these 50 years they have not set up anything. Except a single firm CIBA, there is no single firm which has set up any kind of research laboratory or any kind of indigenous plant for processing or making these things, these basic drugs in India. How has this patent law helped and encouraged the people to go in for research and invention? On the contrary, it acts as a deterrent factor.

I want to ask one question. I know, at least I am told—and if I am wrong the Minister will correct me—that in the original draft of this Bill, which has later on been watered down the period for the validity of patents particularly in respect of food and medicines and drugs was placed at seven years. Now that seven years has been again, in the present Bill, increased to 10 years. As far as the Federation of Indian Chambers of Commerce and Industry is concerned, they are fulminating even against this. They think that the period of 10 years is too short and that it will amount to a virtual abrogation of patents. That is what the FICCI memorandum says. I want to know why the period of 7 years, which was stipulated in the original draft, has been again increased to 10 years in the case of drugs and medicines. Who is responsible for it? Under whose pressure, to suit whose interest was it done?

The FICCI memorandum says there should be no ceiling on royalties and in every particular case, there should be negotiations between the patent-holder and the man who gets the licence. I know in the original draft, probably at the instance of the Health Ministry, it was laid down that the maximum ceiling on royalties would be 2 per cent. So many comments appeared at that time in the newspapers and economic journals in the country that 2 per cent was quite adequate remuneration. Now suddenly we find that it has been increased to 4 per cent. Not only that. Clause 88(5) says:

> "... the royalty and other remuneration reserved to the patentee under a licence granted to

any person after such commencement shall in no case exceed four per cent of the net ex-factory sale price in bulk of the patented article".

When the minister has laid so much emphasis in the introductory speech on the fact that it is not the finished article which is allowed to be patented now but only the process, why is it that when we come to the calculation of royalty, it is the patented article, *i.e.* the product, which is taken as the base for calculating the royalty on the basis of its ex-factory sale price? The Minister knows that a great many of these pharmaceutical concerns obtain part of their basic raw materials from abroad and part of them indigenously. When the royalty is calculated on the ex-factory sale price of the finished article, it means we are including in it as a component even the cost of the indigenously procured raw materials and the cost of production. Is that due to any particular inventiveness or discovery that that man has made to his credit on the basis of which the royalty must be calculated? This is a gross surrender which is being perpetrated here in the interests of big patent-holders, particularly foreigners who are working in collaboration with others here.

Therefore, my demand is that in calculating royalty, it must be minus the cost of indigenous raw materials and the cost of production. Why should they be given credit for this? We find a very serious concession has been made here.

Clause 85 stipulates the matters that the Controller of Patents shall take into account when he is going to issue compulsory licences. I draw attention to sub-clauses (iii) and (iv) which say:

"(iii) where the invention relates to a scheduled industry within the meaning of the Industries (Development and Regulation) Act, 1951, whether the applicant would be granted permission to work the invention, if a licence is granted.

(iv) the capacity of the applicant to undertake the risk in providing capital and working the invention, if the application were granted."

After I, as the applicant, am considered by the licensing authorities under the Industries (Development and Regulation) Act, 1951, to be a person who is deserving of a licence, what is the necessity again for my capacity to undertake the risk in providing the capital and working the invention to be taken into consideration? If I have been given an industrial licence by the licensing authority under the Industrial (Development and Regulation) Act, that is final. There is a process by which that licence is given; everything is enquired into before the licence is given. After that, why should the Controller be given the power again to probe into my capacity to undertake the risk in providing capital and working the invention if the applications were granted? This double probe was not there, according to my information, in the original draft. It has been put in under pressure so that it will provide a loophole or a handle for the patent-holders to go to the court, challenge the Controller's decision and hold up the proceedings as far as possible. These are some of the points to which I would like to draw the minister's attention.

The minister has said that the process will be patented and not the products and this is going to be a very big step forward. As far as I understand it—and I have consulted opinions, written as well as oral, of some people who are in this country considered to be distinguished scientists and also people in the field of pharmaceutical industries and research institutes and they say—in a country like India confining patents to processes will mean very little for the simple reason that we have no advanced chemical industry. India is

[Shri Indrajit Gupta]

still an under-developed country and for sometime to come our indigenous talent will have to rely on the known processes which are already there. That means, processes which are under patent. So, we will not be really able to create a break-through.

The Minister spoke at length about licences of right. The question is: will this provision for licences of right really be an effective break-through of the monopoly?

Shri T. N. Singh: It should be.

Shri Indrajit Gupta: But it may not be for the simple reason that the Indian firms have to obtain the licence from the patentee and naturally the Indian firms also are not innocent people; they also would like to make as high profits as they can. So, there will be a temptation on their part to rely on the patentee for his technical know-how also. When giving the licence, the patentee will be in a position to dictate certain terms and conditions by which the licensee will also agree to market that drug or medicine at almost the same exorbitant price which the original patentee was doing. So, this will not really prove to be an effective break-through of the monopoly in practice.

I submit with all the emphasis at my command that as far as these life-saving things are concerned, where we are concerned with sick people, invalids, children and old people, there is no moral ground whatsoever for retaining the patents law. They should be made non-patentable. If inventions regarding atomic energy can be made non-patentable, why should not foods, drugs and life-saving medicines be made non-patentable? This is my demand and I hope the Joint Committee will consider this matter in its proper context.

It is necessary for the House to remember the kind of thing which is going on, because we have been continually told about the great proprietary rights which must not be expropriated. How are those rights being practised now? There is a well-known drug called Librium in the market and the patent-holder at the moment is the Swiss firm of Roche. The basic drug for this Librium can be imported today if we want from a country like Italy at a price of Rs. 312 per kg. c.i.f. price. The price at which Roche obtains this from its own source is Rs. 5,500 per kg. If one calculates the price at which they market their drug made out of this material, it works out, per kg., to Rs. 11,000.

Shri P. S. Naskar: What about the other one?

Shri Indrajit Gupta: These are the robbers, these are the gentlemen robbers to whom we have now to consider whether we are going to pay adequate compensation or not, compensation for robbery for all these years.

Shri P. S. Naskar: At what price does the other man, who imports from Italy at Rs. 312, sell his finished product?

Shri Indrajit Gupta: That is your job. I am not paid to do that. You are paid for it and you should tell us about it.

Shri T. N. Singh: Sir, it is not fair for the hon. Member to say that we are paid for it.

Shri Indrajit Gupta: What I meant was that he is the minister in charge and he should tell us. I do not mean any dis-respect to anybody.

Shri P. S. Naskar: You have given half the fact, what about the other half?

Shri Indrajit Gupta: You can give the remaining half if you can.

Then, Sir, take Vitamin B/12. Messrs. Merck-Sharpe and Dohme are the patent holders. Their selling price in this country is Rs. 230 per gram whereas, everybody knows, the international price at which it is obtainable from other countries is between Rs. 30 to Rs. 40. Instead of that they are charging Rs. 230 per gram. Messrs. Pfizer are the patent holders for Dexamethazone. One-and-

a-half years ago their price was Rs. 60,000 per kilogram and under pressure and threats from the Import Controller, who threatened them that if they went on charging this unconscionable price he would stop the import gradually or get the material from other sources, in one-and-a-half years these Pfizer firm reduced the price of Dexamethazone from Rs. 60,000 to the present rate of Rs. 16,000. This is the kind of thing which has been going on. I am informed that at this very moment in the High Court of Bombay an injunction has been issued against the Haffkine Institute, which is one of the research institutes in this country. Their crime was that they have invented a process of making Tolbutamide indigenously. Along comes the patent holder, a German firm—Hoecst—and they appear as applicants before this court because their market will disappear and they must stop it at all costs. The Patent Law as it exists at present gives them that opportunity. They apply for an injunction and the injunction is issued on the Haffkine Institute that they should not proceed further with this process of making Tolbutamide. Who are these people? They are traders in death. They are making money out of the lives of people, out of the sick people and out of the invalids. These are the people whose organised attempt and action is going on, together with their collaborators in the country, to see that this law is not made into an anti-monopoly weapon and our country is not allowed to develop its indigenous industry. We are going to tinker with it making such few amendments here and there that even Shri Dandeker and Shri Chatterjee despite their best efforts could not work up indignation. How can they criticise something which suits them all right?

Shri N. C. Chatterjee: That is not fair.

Shri Indrajit Gupta: Then there is the firm of Parke Davis. Chloromphenycol is their product. They are the patent holders for Chloromphenycol. They were given a licensed capacity in this country of 18 tons for the last—I do not know how many years—12 or 15 years. Their performance so far is that they have reached only 12 tons. And, they are importing the entire raw material. They have not started any plant, any process or anything for making it in this country. This is supposed to be the wonderful patent law which encourages people to go in for production, research and inventions. They continue to import the whole thing.

Sir, these are some examples which I wanted to give. So many more could be given of the kind of thing that is going on in the country.

Finally, I must make a reference, because it is connected with this pressure which has been put upon the Government, to the other avenue that is open by which, whether we dealt with the patent law or not adequately, we could have exerted counter pressure in the national interest against some of these foreign patent holders. In the year 1956, as the hon. Minister knows, a wonderful offer was made to us, worth about Rs. 80 crores on very easy terms, by the Soviet Government for setting up four major plants which together would constitute almost an integrated drug industry, which would almost make our country self-reliant in synthetic drugs, in vitamins, in anti-biotics, in hormones and intermediate chemicals. In 1956, as I said, this offer was made and after a lot of procrastination and delays and all sorts of evasions an agreement was signed only in 1962 in a thoroughly mutilated form, because if these Soviet plants were to come into operation as suggested by them, as projected by them, it would mean virtually the end of the stranglehold on our market which is held by these big monopoly concerns who operate from abroad through collaborators. What is the result of this mutilated agreement? The basic plant which was to make synthetics has been left out and handed over to some private German firm for them to make it. They have decided that the Soviet public sector plant should not make it but some private

[Shri Indrajit Gupta]

German firm should make it. My information is, subsequently that German firm has declined to build that plant, and now I do not know where we are. The hormone plant has been left out of the agreement, and the synthetic drug and vitamin plant which the Soviet experts wanted to build to the capacity of 2400 tons of 65 different drugs has been cut down by our Government, in the agreement, to 800 tons of only 20 drugs. I say here, though words may sound harsh, a deliberate sabotage has been carried out. Here was an opportunity, a golden opportunity, to break this stranglehold and to put India on its own feet and make it self-reliant on basic drugs. It is not being done. Under whose pressure, under whose impact is it not being done.

Sir, I do not wish to say anything more, but I hope when the Joint Committee goes into this thing, apart from the details of the various clauses, they must try, I would respectfully suggest, to view this entire piece of legislation in the context of India's national interest and needs today *vis-a-vis* the interests of these foreign monopoly patent holders who have been trying from 1911 to keep the Indian market entirely within their monopoly grip and to exploit it as a colony. We are not prepared to put up with that kind of thing any more Therefore, the Government should be bold now I do not know if Shri Shastri's assurance, which is reported in the Press, given last December to some British manufacturing medicine king in London, means that as long ago as December Government had already decided to give up the fight. We know there are contradictions inside the ranks of the Government, but somehow they get reconciled and patched up and they try to make the best of a good contradiction; whatever it is, I would appeal to Government to keep the national interest primarily in view and not to yield to undue pressure which has been put upon them, otherwise the whole things would be nothing but a hoax which would be perpetrated upon the country.

Shri C. M. Kedaria (Mandvi): Mr. Deputy-Speaker, Sir, I support the Bill and I do appreciate the spirit of this Bill, as Government cannot carry on the monopolistic tendencies in the field of drugs and medicines.

The Patent Act is in force in India for the last 50 years and the existing patent law is very strong in the matter of protecting inventions. In spite of this it will be found that our country has not made much headway in industrial growth and scientific research particularly in the field of medicines and drugs. Even today, it will be found on making a scrutiny that more than 95 per cent of the patents are held by non-Indians. It is no doubt true that patents do encourage inventibility but the conditions required for taking full advantage of the protection given by the patent law to the inventor, I must say, do not unfortunately exist in our country. We are a developing country and what would be applicable to a highly developed country would not hold good to a developing country such as India.

With regard to the drug industry I must point out that very little research is done by the industry in the country. Whatever research is carried out currently is either by the universities or by the national laboratories, both of which are sustained by public funds. It is quite necessary to encourage research, but it is not necessary that there should be patent law for this purpose. The inventors and scientists can be rewarded by means other than that of giving patents.

Drug is a commodity required by the poorest section of the people and any exploitation of the dire needs of the poor patients would not be morally justified. The great scientists who have contributed to the alleviation of human suffering have never cared for patents. I will quote only two instances. Insulin was discovered by Best

and Benting. Penicillin was discovered by Flemming. These two momentous discoveries that have contributed so largely to the saving of millions of lives were not made by the persons concerned for personal gains. Their reward lay in the sense of achieving something that has resulted in relieving miseries.

The commercial exploitation of patents without regard to the general welfare of human beings cannot be justified in the conditions existing in India. Patents give rise to monopolies. Patent holders enter into cross agreement with other interested parties with a view to maintain a particular price level. This fact has been brought out very clearly in USA by the late Senator Kefauver who carried out investigations in the drug industry. There are very revealing facts which open our minds. He remarked in his report that India is one of the countries where price of drugs is the highest in relation to the earning capacity of the people. I would like to supplement what Shri Indrajit Gupta has said about the price structure fixed by foreign collaborators. He has referred to cholormphenecol manufactured by Parke Davis. I would like to say that not even a gram of chloromycetin is sold to any other party. Park Davis have sole monopoly for this drug. The international price of chloromphenecol powder is only Rs. 95 per kilo whereas Parke Davis sells one kilo powder capsule of 250 mg. at about Rs. 3,300. Take another drug librium, which is available at Rs. 3·00 per kilogram. It is sold in India in tablets at Rs. 22·000 per kilogram. This is manufactured by Roche. This will show how the foreign collaborators are exploiting the Indian market.

India can very well take a lesson from the Italian drug industry. In Italy drugs are not patentable. Still they can compete in the world and export at highly competitive prices, even though they were established during the post-war period. This can be a guiding force to our country.

The patent law, which was designed in 1911 to protect foreign interests, has been perpetuated in this country in spite of 18 years of independence. Today the industry is not in a happy position as it has to import the raw materials and the intermediates. If the patent law is really beneficial to India, we would not have had to face the present situation in the period of severe trial through which our country is going through.

We are faced with situation where our utter dependability on foreign aid should force us to turn our lights inside to see whether the patent law has been of real help to the country. My own conclusion is that it has not and the sooner it is ended the better. I would go to the extent of saying that the patent law should be abrogated and that there should be no patents in drugs. However, since our Government has brought forward this Bill in the interests of the nation and in the interest of the industry I do support it and congratulate the Government for bringing it.

श्री युद्धवीर सिंह (महेन्द्रगढ़): उपाध्यक्ष महोदय, जो बिल प्रवर समिति को सुपुर्द करने के लिये हमारे सामने प्रस्तुत है, उस के पीछे जो भावना है, वह लगातार सौ सालों से संसार के विभिन्न भागों में लागू है। अगर कोई आदमी काफी मेहनत कर के और काफी पैसा खर्च कर के किसी क्षेत्र में कोई आविष्कार करता है, तो कोई अन्य व्यक्ति बिना किसी प्रकार का दाम दिये हुए उस की मेहनत को चुरा न ले जाये और उस से फायदा न उठा ले, इस की व्यवस्था करने के लिए पेटेन्ट ला लागू किया गया।

हमारे देश में 1911 से यह कानून लागू है, जिस के अन्तर्गत अब तक पेटेन्ट्स के सम्बन्ध में कार्य होता रहा है। अब तक मूल रूप से इस कानून में कोई अन्तर नहीं किया गया है। इस विषय में 1948 में एक कमेटी बिठाई गई थी, लेकिन उस की सिफारिशों को कानून की शक्ल नहीं दी गई। बाद में 1957 में श्री राजगोपाल अयंगर की अध्यक्षता में, जो पहले मद्रास हाई कोर्ट के जज थे, और बाद में सुप्रीम कोर्ट में आ गए, एक कमेटी नियुक्त

[श्री युद्धवीर सिंह]

की गई, जिस की सिफारिशों पर वर्तमान कानून की नींव रखी गई है। श्री राजगोपाल श्रयंगर की प्रायः 99 प्रतिशत बातों को मान लिया गया है श्रौर बदलती हुई परिस्थितियों के श्रनुसार कुछ श्रन्य बातों का इस कानून में समावेश करने का प्रयत्न किया गया है।

इस बिल को पढ़ने के बाद श्रौर देश की बदली हुई परिस्थितियों को देखने के बाद मैं इस बिल की कुछ बातों का तो समर्थन करता हूं, जब कि कुछ बातें ऐसी हैं, जिन के प्रति मेरा विरोध है। इस बिल की मूल बातों का जिक्र करते हुए कम्युनिस्ट सदस्य, श्री इन्द्रजीत गुप्त, ने कहा है कि इस बिल के द्वारा विदेशियों को इस बात का मौका मिलता है कि वे हमारे देश में लूट मचाते रहें, एक्सप्लायटेशन करते रहें, जैसा कि वे काफी लम्बे श्ररसे से करते रहे हैं। इस में कोई शक नहीं है कि हमारे देश के बहुत से क्षेत्रों पर, चाहे वे दवाइयां हों, बच्चों या बड़ों के लिए फूड हो या मशीनें हों, श्रधिकतर बल्कि नब्बे प्रतिशत, विदेशों के रहने वालों का कब्जा है, जिन में मैजारिटी इंगलैंड के लोगों की है। इस बात को कल भी इस महकमे के मंत्री महोदय ने श्रपने शुरू के भाषण में स्वीकार किया है। इस में कोई शक नहीं है कि इस में यह बात नजर श्राती है। लेकिन पेटेन्ट ला पर बोलते हुए श्रगर मैं केवलमात्र इस बात को लूं कि कुछ लोगों के दबाव के कारण मंत्री महोदय यह बिल लाए हैं, जिस से उन लोगों को लाभ हो श्रौर हमारे देश की श्रपनी इंडस्ट्री न बढ़ सके, तो मैं इस कानून को बनाने वालों के साथ श्रधिक न्याय नहीं करूंगा। इस का कारण यह है कि इस कानून की पृष्ठभूमि में यदि मैं मूल नीतियों की चर्चा करूंगा, तो श्रकेला यह मंत्रालय ही जिम्मेदार ही नहीं ठहरेगा। बल्कि पूरी कैबिनैट श्रौर योजना कमीशन की सारी नीतियां जिम्मेदार होंगी। यदि हम उन पर सामूहिक रूप से उत्तरदायित्व डालेंगे, तब हम इस सम्बन्ध में न्याय करेंगे।

इस पेटेन्ट ला के गुण-दोषों, हानि लाभों के विषय में सिलैक्ट कमेटी के मेम्बर विचार करेंगे। मैं इस सम्बन्ध में बहुत संक्षेप से चर्चा करूंगा। जो बातें यहां पर कही गई हैं श्रौर जिन के बारे में मेरी एक राय है, उन का मैं जिक्र नहीं करूंगा, लेकिन धाराश्रों श्रौर उप-धाराश्रों की शक्ल में श्राने वाली एक दो बातों के बारे में मैं श्रपने विचार रखूंगा।

जैसा कि कल मंत्री महोदय ने बताया है, जो विदेशी लोग इस देश में श्रधिक मात्रा में इस काम को कर रहे हैं, उन पर रोक लगाने के लिए कुछ कदम उठाए गए हैं। एक मोटा कदम यह है कि यदि कोई विदेशी श्रपने श्राविष्कार को पेटेन्ट करवाने के बाद दो साल तक हमारे देश में श्रपने श्राविष्कार के सम्बन्ध में कोई ठोस या सक्रिय कदम नहीं उठाता है, तो इस कानून के श्रन्तर्गत गवर्नमेंट उस पेटेन्ट को कैंसल कर सकती है, पेटेन्ट के श्रधिकार को समाप्त कर सकती है।

इस बारे में एक्स्ट्रीम पर जा कर एक विचार श्री इन्द्रजीत गुप्त ने व्यक्त किया है कि इस सम्बन्ध में जो कुछ हुश्रा है, वह कुछ श्रादमियों के दबाव की वजह से हुश्रा है। दूसरी तरफ मेरा भय है कि श्रगर इस मामले में हम मूल नीतियों को श्रपने सामने न रखेंगे श्रौर देश की वर्तमान परिस्थितियों तथा श्रपने सीमित साधनों को श्रपनी दृष्टि के सामने रखते हुए इस कानून की व्यवस्थाश्रों पर विचार नहीं करेंगे, तो हम इस विषय के साथ न्याय नहीं करेंगे। हम जानते हैं कि हमारे देश में कमियां हैं, हमारे यहां वैज्ञानिक प्रगति के क्षेत्र में काफी पिछड़ापन है, श्रन्य देशों के मुकाबले में हम वैज्ञानिक प्रगति में पीछे हैं। यदि हम किसी विदेशी के श्राविष्कार को श्रपने देश में पेटेन्ट करते हैं श्रौर यदि वह दो साल में या इस सम्बन्ध में निर्धारित श्रन्य सीमाश्रों में श्रपने श्राविष्कार के सम्बन्ध में इस देश में श्रावश्यक कदम नहीं उठाता है,

जिस के परिणामस्वरूप हम उस के पेटेन्ट का अधिकार खत्म कर देते हैं, तो क्या हम अपने देश की जनता को उस तजुर्बे और अनुभव के लाभ से वंचित नहीं कर देते हैं, जो कि उस आदमी ने विदेश में प्राप्त किया है ?

या तो हम इस मामले में आत्मनिर्भर हों, हमारी वैज्ञानिक प्रगति बहुत अच्छी हो, यह मंत्रालय दूसरे मंत्रालयों के साथ समन्वय स्थापित कर के और उन की नीति के साथ ताल-मेल बिठा कर इस देश में मशीनें दवाइयां और खुराक आदि की इंडस्ट्रीज और कल-कारखाने स्थापित करे, लेकिन यदि हम ऐसा नहीं कर पाते हैं, क्योंकि हमारे यहां साधनों का अभाव है, कुछ कमियां हैं, तो दूसरे देशों के लोगों के आविष्कारों का लाभ प्राप्त करने के लिये हम को पेटेन्ट के अधिकार के विषय में काफी उदारता दिखानी होगी। हम को यह नीति कम से कम उस समय तक अपनानी होगी, जिस समय तक हम उस सीमा तक न पहुंच जायें, जहां तक अन्य देश पहुंचे हुए हैं। उस के लिए यह आवश्यक है कि हम अपने साधनों को अधिक सक्रिय करें, उन को हरकत में लायें। यदि हम ऐसा नहीं कर पाते हैं, तो फिर कोई भी आदमी इस बात को सहन नहीं कर सकता कि औषधि या खुराक आदि के क्षेत्र में किसी दूसरे देश में जो प्रगति की गई है, उस का लाभ उठाने का अवसर उपलब्ध न हो।

उदाहरण के तौर पर यदि किसी अन्य देश में किसी आदमी ने कैंसर की बीमारी के सम्बन्ध में किसी दवाई का आविष्कार किया, हम ने देश और विदेश की सीमा बांध कर उस दवाई को पेटेन्ट का अधिकार दिया, वह आदमी दो साल तक उस दवाई के सम्बन्ध में यहां पर कोई कार्यवाई नहीं करता, कोई चीज स्थापित नहीं करता, जिस के परिणामस्वरूप सरकार ने उस पेटेन्ट के अधिकार को कैंसल कर दिया और उस अवस्था में यदि वह दवाई 90, 95, 100 या 100 प्रतिशत से भी अधिक ड्यूटी लग कर बाजार में आती है, तो कोई आम आदमी तो उस को नहीं खरीद सकता। यहां यह नहीं बन पाई है चूंकि आप ने बहुत सी बातों को पूरा नहीं किया है। जैसे मुझ से पहले बोलने वाले माननीय सदस्य बातें कह गए हैं कि उन सारी बातों के अन्दर आ कर पूरा नहीं किया है ठीक नहीं है। दूसरे हमें यह भी देखना होगा कि आम आदमी की जेब में क्या ताकत है, क्या उस की इतनी आमदनी है कि वह अपने पैसे से उस दवाई को खरीद सके ? अगर आपने इन चीजों को नहीं देखा तो इस का असर यह होगा कि लोग मरेंगे जिस प्रकार आज वे कैंसर से मर रहे हैं। यह मैं ने एक उदाहरण ही दिया है। सारी बातों के अन्दर हमें व्यावहारिक होना पड़ेगा, ठंडे दिमाग से हमें सोचना होगा। केवल मात्र नीति को ही पकड़ कर हम चल नहीं सकते हैं। हमें अपनी जो कमजोरी है उस को भी ध्यान में रखना होगा। हमें इस का भी ध्यान रखना होगा कि वैज्ञानिक तथा अन्य प्रकार के आविष्कारों के क्षेत्र में दुनिया के बहुत अधिक देशों से हम काफी पीछे हैं। उन लोगों ने जो कुछ भी तजुर्बे हासिल किए हैं, उन लोगों ने जो-जो प्रगति इस क्षेत्र में प्राप्त की है, वे लोग जहां तक जा चुके हैं, उस से आगे हमें जाना होगा। हमें नए सिरे से काम को आरम्भ नहीं करना है। बल्कि जितनी सीढ़ियां वे चढ़ चुके हैं, जितने लक्ष्य वे प्राप्त कर चुके हैं, जितनी मंजिलें वे तय कर चुके हैं, उन सब का लाभ उठाते हुए उन मंजिलों के ऊपर से हमें अपने सफर को तय करना होगा। हमें परिधियों में बंध कर काम को नहीं चलाना है। अपने देश के रहने वालों को काफी संरक्षण प्रदान किए गए हैं। हमें यह भी सोचना होगा कि दो साल की जो सीमा हमने बांधी है कि दो साल के अन्दर-अन्दर अगर कोई आदमी उस को अपने देश में नहीं लाता है तो उस का लाइसेंस कैंसल कर दिया जाएगा और दुबारा

[श्री युद्धवीर सिंह]

और कोई जो तरीका सारी की सारी बात के लिए लगाया गया है, इस को हमें देखना होगा। दो मिनट के अन्दर यह कह दिया गया है कि विदेशी आदमी अपनी पूंजी नहीं लगायेगा, लोगों को इंसैंटिव नहीं होगा, उन के अन्दर उत्साह नहीं होगा, ये सब महज प्रोपेगंडे और प्रचार की बातें नहीं हैं, बल्कि इन सारी की सारी बातों का सीधा सम्बन्ध हैं सारी की सारी जो व्यावहारिक कठिनाइयां हैं उन के साथ। इन कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए प्रवर समिति में जो भी इस मामले में संशोधन आते हैं उन पर सरकार विचार करे और इस के बारे में कोई हल निकाले। यह ठीक है कि दूसरे देशों के आदमी 90 प्रतिशत यहां के आदमियों को एक लम्बे समय से काफी क्षेत्रों में लूट रहे हैं। लेकिन आप को यह भी देखना होगा कि जब तक दवाओं और बेबी फूड वगैरह तथा दूसरी जो आवश्यक चीजें हैं उन के आप देश में इतने उद्योग धंधे नहीं पैदा कर देते हैं कि हमारी मांग इन चीजों की उन उद्योग धंधों से पूरी हो सके, उस समय तक तो कम से कम हम लोगों को उन्हें प्रोटैक्शन देना ही होगा। बीच का जो अन्तर है स में बहुत सारे आदमियों को इस सारे मामले के अन्दर शहीद कर दें, बच्चों को फूड ही न मिले, दवाइयां ही न मिलें, यह ीक नहीं होगा। इस से किसी समस्या का हल नहीं निकलेगा। खाली प्रचार और प्रापैगण्डे की बात नहीं होगी। इस से बहुत सी व्यावहारिक कठिनाइयां ैदा होंगी।

अपने देश में तथा दूसरे देशों में भी एक बहुत लम्बे अर्से से यह चर्चा का विषय बना रहा है कि जो इस प्रकार की चीजें हैं, दवाईयां आदि हैं सामान्य जीवन में प्रयोग में आने वाली चीजें हैं उनका आया पेटेंट करें या न करें, पटेंट करने का जो कानून है उसकी सीमा के अन्दर उसको लायें या न लायें। संसार के विभिन्न भागों में इस पर चर्चा होती रही है। इस सारे मामले के अन्दर आपने दो वर्ष का समय रखा है। आपका विचार है कि हमारा बहुत बड़ा देश है और 44 करोड़ के करीब यहां की आबादी है। कम से कम एक चीज है। उसके मामले में इस कानून के अन्दर भी आपको परिवर्तन करना होगा। केवल एक ही आदमी को चाहे वह इस देश का हो या बाहर का हो, एक ही प्रकार की चीज के मामले में अगर पेटेंट का जो कानून है उसके अधिकार क्षेत्र में ले आयें और वही आदमी केवल मात्र उसका प्रयोग करे यह जो व्यवस्था आपने की है यह कामनसेन्स वाली बात नहीं है, यह समझ में आने वाली बात नहीं है। उस में अगर समन्वय स्थापित किया जा सके, तालमेल सारी बात के अन्दर बिठाया जा सके तो अच्छा होगा। या तो जीवन के नित्य प्रति काम आने वाली चीजों को आप इस कानून की परिधि से बिल्कुल बाहर रखें लेकिन अगर ऐसा नहीं करते हैं तो उसकी क्या रूपरेखा हो यह सोचने की बात है। एक को जब आप पेटेंट का अधिकार दे देंगे तो दूसरा जिसको नहीं दिया जाएगा वह न्यायालय में जा कर खड़ा हो जाएगा और कह देगा कि उसने नकल की है और उस पर जुर्माना होगा। सजा होगा या और जो कुछ होना है होगा, लेकिन अगर कानून की परिधि से आप उसको बाहर रखते हैं, किसी सीमा तक अगर कानून की परिधि से वह बाहर रहती है तो मैं समझता हूं कि जहां उनके अन्दर आपस में कम्पीटीशन चलेगा, बीस तीस आदमी जब मैदान के अन्दर होंगे तो वे मुकाबले में आयेंगे, कम्पीटीशन में आयेंगे तो वह चीज जनता को सस्ती मिलेगी। सामान्य जनता को इन सारे मामलों में, दवाईयों आदि के मामले में एक ही चीज से सरोकार होता है कि उसको चीजें सस्ती मिलें। जो चीज पेटेंट हो जाएगी उसका स्टैंडर्ड तो बेशक आप मेंटेन करेंगे लेकिन आम जनता इन सारी बातों की गहराई में नहीं जाती है, कानून के चक्कर में नहीं

जाती है । वह तो खाली कीमत को देखती है । इसको बाहर रखते हुए किसी भी संदर्भ में इस पर विचार किया जा सके तो अच्छा होगा । जैसे मैंने बताया है कि केवल मात्र राय दे देने से कि इसको पेटेंट कानून की परिधि में लाया जाए अथवा बाहर रखा जाए समस्या का हल नहीं निकलता है । हो सकता है कि जो सारे मामले को अच्छी तरह से समझते हों, जिन लोगों का इस सारे मामले का साथ सम्बन्ध हो जिन को पिछले 60, 70 या 100 साल का तजुर्बा हासिल हो, वे कोई हल निकाल सकें ।

इसमें कोई शक नहीं हैं जैसा मैंने आरम्भ में कहा है कि इस कानून को लाने में काफी न्याय बरता गया है । एक बहाव के अन्दर बह कर इस सारी चीज को नहीं किया गया है । मेरे साथ जो कम्युनिस्ट मैम्बर बैठते हैं इन्होंने सारे कानून के बेस को ही हिला दिया है, इसकी जड़ को ही हिला दिया है । मैं नहीं समझता हूं कि ऐसी कोई चीज है । दबाव किसी का इन पर पड़ा है या नहीं मैं नहीं जानता हूं । किस ने दबाव डाला है, इधर से डाला है या उधर से, मैं नहीं जानता हूं । मैं तो यह देखता हूं कि जिन लोगों के बारे में आप कहते हैं, विदेशी जो इन सारी चीजों को बनाने वाले हैं उनके बारे में आप कहते हैं कि उनको इसके अन्दर बहुत प्रश्रय दिया गया हैं, वह ठीक नहीं है । दो साल वाली कंडीशन लगाने के बाद कोई बहुत अधिक प्रश्रय दिय गया है या कोई बहुत सहारा उनको मिलता है, ऐसा मैं नहीं देखता हूं।

समय बदल रहा है । इसमें कोई शक नहीं है । दुनिया बहुत प्रगति कर रही है । सभी क्षेत्रों में वह प्रगति कर रही है । अणु बम का आविष्कार हो चुका है । इसके आविष्कार से पहले विज्ञान की एक खास अपनी प्रगति की रफ्तार थी । अणु के आविष्कार के बाद अब रफ्तार ने दूसरा रूप पकड़ा है । गति के अन्दर बहुत तेजी आ गई है, रफ्तार बहुत तेज हो गई है । ऐसी स्थिति में फर्ज कर लीजिये आज आप एक आविष्कार को पेटेंट करते हैं । आपने दस साल की अवधि रखी है । यह आवश्यक है कि चौदह साल से दस साल किया है । मूल सूझाव का ज़िक्र करते हुए आपने सात साल का हवाला दिया है । अपने आरम्भिक भाषण में आपने कहा है कि इसी प्रगति को ध्यान में रखते हुए चौदह साल के बजाय आपने दस साल का समय रखा हैं । मैं समझता हूं कि दस साल भी इस मामले के अन्दर अधिक है । इसका कारण मैं बतलाना चाहता हूं । आज कोई आविष्कार होता है और आप उसको पेटेंट कर लेते है तो उसके दो तीन साल के बाद कोई और बहुत ज्यादा प्रगतिशील आविष्कार हो जाता है उसी क्षेत्र में तो उसके बाद भी यह जो अकेला आदमी है वह उसी ढर्रे के अन्दर सारी बात को चलाता है और आप हाथ नहीं उठाते है तो इसका नतीजा यह होगा कि देश और जनता उस सारे आविष्कार से वंचित रह जाएगी । उससे समस्या का हल नहीं निकलता है । हमें देखना होगा कि किस प्रकार से यह चीज हमारे लिए लाभदायक सिद्ध हो सकती है । हम पिछली लकीर को ही पीटते चले जायें तो कोई लाभ नहीं होगा । दस साल की अवधि को आप कुछ कम कर पाते तो ज्यादा अच्छा होता । ड्राफ्ट बिल में सात साल था । मेरे ख्याल में छः या सात साल काफी हैं । अगर आप छः या सात साल नहीं कर सकते हैं तो मैं कहूंगा कि आप अपने पास कोई पावर इस बारे में जरूर रखें या बिल के अन्दर कोई धारा जरूर रखें जिससे अगर कोई ऐसी चीज जिसके बारे में यह कहा जा सकता हो कि यह बड़ा आविष्कार है, उसको पेटेंट किया जा सके। फर्ज कीजिये स्पुतनिक है । स्पेस के अन्दर उसको फेंका गया है और उसको फेंके जाने से सारे मामले के बारे में जो धारणायें बनी हुई थीं, गति के क्षेत्र में जितनी पुरानी मान्यतायें बनी हुई थीं उनके अन्दर बड़े भारी क्रान्तिकारी परिवर्तन हो गए हैं तो उसको भी पेटेंट करने का आपके

[श्री युद्धवीर सिंह]

पास अधिकार होना चाहिये। इस तरह का कोई भी क्रान्तिकारी परिवर्तन करने वाला अगर कोई आविष्कार होता है और पहले वाला आविष्कार जिसको आपने पेटेंट कर रखा है वह पुराना पड़ता दिखाई देता है तो या तो सरकार के पास अधिकार होना चाहिये कि वह दूसरा जो आविष्कार है उसको भी पेटेंट कर सके या फिर दूसरे के ऊपर दबाव डाल सके कि इस बदलती हुई दुनिया के साथ वह भी कदम बढ़ा कर चले, वह भी इस दिशा में अपने पग उठाये या अपने आविष्कार को उसी प्रकार का बनाये जिस प्रकार से कि नये आविष्कार के बाद सारे का सारा मामला बन गया है। इस चीज पर आपको ठंडे दिमाग से सोचना होगा।

मैंने शुरू में कहा था कि आज इन सारी परिस्थितियों के अन्दर केवल मात्र नीतियों का ही प्रश्न नहीं रह जाता है। केवल यही सोचना नहीं होता है कि यहां बैठकर कौन सी नीति बनाई जाए। बल्कि यह देखना होता है कि किस प्रकार से समन्वय स्थापित किया जाए, सारे संसार में जो प्रगति हो रही है उसके साथ कदम मिला कर किस तरह से आगे बढ़ा जाए। इसमें कोई शक नहीं है कि हम दुनिया के देशों से काफी पीछे हैं। इस कानून के पीछे जो मूल भावना है उसके प्रति मैं अपनी सहमति प्रकट करता हूं। पिछले कुछ वर्षों से, 1911 से लेकर आज तक इस क्षेत्र में कदम उठायें जा रहे हैं। आज एक नए तरीके से इस मंत्रालय को इस काम को करना है और जो नया कानून मंत्री महोदय लाये हैं उसके लिए मैं उनको धन्यवाद देता हूं। मैं समझता हूं कि नारेबाजी में जाने की जरूरत नहीं है। हमें केवल यह देखना है कि जो नया आविष्कार है या जो नई चीज है या कोई भी नई चीज दुनिया में कहीं से भी मिल सकती है, वह हमें प्राप्त हो और उसको प्राप्त करने के लिए हमें यदि किसी अपने स्वार्थ को छोड़ना भी पड़े तो उसको भी छोड़ने के लिए हमें तैयार रहना चाहिये। देखना केवल यही है कि लोगों का फायदा किस में है। मुझे एक संस्कृत का श्लोक याद आता है :

तातस्य कूपो यमिति ब्रुवाण
क्षारम् जलम् कापुरुषा पिबन्ति

यह पंचतंत्र की लाइन है। बाप दादा चूंकि इस कुएं का पानी पीते चले आ रहे हैं और वह खारा पानी भी है तो हम भी उसको पीते चले जायें, इस परम्परा में हमें नहीं पड़ना है। किसी भी कोने में किसी भी प्रकार का आविष्कार होता है उसका फायदा इस प्रकार के कानून के अन्तर्गत या उसके ऊपर कोई शर्त लगाकर जिससे देश उसके लाभ से वंचित रह जाए, वर्तमान भारत का नागरिक बरदाश्त नहीं कर सकता है।

Shri Priya Gupta (Katihar): Mr. Deputy-Speaker, Sir, I rise to make certain observations on this Pa.ents Bill, 1965. This Bill as introduced by Shri T. N. Singh, the Minister of Industry in the Ministry of Industry and Supply, has given a slant more towards industry than to the patent itself. What I mean to say is that since this Bill is more in respect of the patent—that is the mother word of this Patents Bill—this should have been introduced by the Minister of Scientific Research. But since this Bill has been introduced by the Minister of Industry, I feel, the slant has been given more towards industry and, therefore, to big business magnates, than to the knowledge of patents, the inventions and other things. That is what I would observe at the very outset.

Coming to the clauses, the clauses are of different rays. It all depends upon the colour of the spectacles. If it is blue, the rays will be blue; if it is white, the rays will be white and if the rays are allowed to pass through the column of water, it will be a spectrum having seven colours in it. Similarly, there are all the details

about it. What I want to say in nutshell is this. We have seen at least some advancement towards the human values and other things from Avadi to Bubhaneshwar— दिखावटी है या कुछ काम का है। Similarly, there should have been some objective view taken about these things from 1911 to 1965. This is a country which is not to be compared in respect of development of industry and other things with the countries of Europe and other countries. When this Bill has been attempted to be prepared or introduced on the basis of an important report that has been submitted what I would have expected is that much weightage should have been given to these two things. Firstly, the Government should have made some provisions in the Bill for attracting the people with initiative to come forward and to materialise their inventive initiative so that some invention can be made over there. Secondly, this binding that a particular product cannot be patented only because within so many specified years some production cannot be made in line with the processes patented so far is quite wrong because there it comes to be a commercial attempt and the real perspective of the whole thing is lost.

Again, I want to impress upon the Ministry one more thing. We have got foreign collaborations in respect of medicines which we require so much. Everywhere we find that the foreign collaboration is 49 per cent and 51 per cent is our share. But what about the know-how portion of it. In how many cases has the know-how portion of it been taken over by us? How long should it take to come to that stage? As most of the hon. Members have pointed, the total cost of the ingredients is in a negligible, microscopic, percentage as compared to the total production cost levied on the product itself. What I want to know from the Ministry is as to what attempts they are going to make—are they going to introduce a separate legislation or to amend this in future or to amend it here and now?—so as to make the know-how easily available to our people by the ways and means as the Ministry might deem fit to be adopted.

The restrictions should be relaxed in respect of patenting of medicines and other things. The Minister of Industries knows much better as to how it could be done for the betterment of our country.

It may also happen like this. It is a question of research; it is a question of availability of the ingredients for research; it is a question of initiative and urge for research. So it may be an accidental coincidence that another research student might as well find out the same processes, but then the embargoes in the clauses of this Bill prevent him from getting it patented because the processes of the one which is already patented and the processes which the other student has found out are almost similar. So this should be kept in view. This will give an impetus to the scientists of our country, a poor country, and I expect that something will be done in this direction.

In respect of the terms of patent and other things, *i.e.*, clauses 53 and 85, the other members have spoken at great length. I have also said at the very beginning that I do not want to go into the details of clauses since I fundamentally differ from the very principle on which this Bill has been introduced.

We have also to take into account the fact that our country is underdeveloped; the scientists do not get much opportunities and we have to depend fundamentally on foreign collaboration. We are today about 47 crores of people and the Mycin group of medicines cannot reach all of them. From the hospitals and dispensaries, the medicines go to only MPs, MLAs and high officials and not to ordinary clerks or villagers or typists or peons or agrarian workers. This is due to the fact that the cost of production is very high. Either the Government should say that in each of the free dispensaries this Mycin group of medicines will be available or they must

[Shri Priya Gupta]

make an attempt to find out the know-how to produce similar medicines for application in a mass scale. I am not a specialist in commerce nor am I a specialist in scientific research, but as an ordinary layman I give you the reaction of the general mass who are deprived of the amenities. Therefore, I solicit through you the Minister of Industries to find out ways and means of making this know-how available, so that the country may be benefited by that. I have nothing more to add and I beg of the Minister to re-orient the provisions of the Bill in such a way as to suit the circumstances of the country and the society and also to suit the pledges the ruling Party has taken from Avadi to Bhubaneshwar for running the Government.

श्री गौरी शंकर कक्कड़ (फतेहपुर) : उपाध्यक्ष महोदय, यह जो पेटेंट विधेयक सदन में प्रस्तुत किया गया है तो कल से जिन माननीय सदस्यों ने इस में भाग लिया तो दो प्रकार की प्रतिक्रियाएं बहुत साफ सामने आयी हैं। एक तो कुछ ऐसा मत है जिससे यह प्रकट हुआ कि अभी तक जो सुविधाएं बड़ी बड़ी फ़र्म्स को मिल रही थीं उन सुविधाओं में अगर कानून में संशोधन करके रुकावट खड़ी की जाएगी तो उसका उधर से विरोध होगा, जो यह चाहते हैं कि उन सुविधाओं में कोई भी कमी न हो। अर्थात् जो उन लोगों द्वारा शोषण होता रहा है उसको अगर रोका जाएगा तो उधर से आपत्ति आयेगी।

दूसरा मत हमारे मित्र इन्द्रजीत गुप्त ने रखा है। वह भी एक एक्स्ट्रीम मत है जो दूसरी ओर ले जाता है और इससे भी हम को देश का भला दिखायी नहीं पड़ता।

एक बात बुनियादी है, और वह यह है कि कोई भी व्यक्ति अगर अपने मस्तिष्क से किसी नई चीज की खोज कर निकालता है, तो वह उसकी एक तरह की प्रापर्टी बनती है और उसने जो खोज करने के बाद नई ईजाद की है उसका लाभ उसको मिलना चाहिए क्योंकि उस ने परिश्रम किया है और वह भविष्य में उसकी रोजी का जरिया बनेगा। इस मामले में सरकार को एक संतुलन कायम रखना है। ऐसा भी न हो कि नई चीज निकालने के बाद उन औषधियों के मूल्य बढ़ा दिये जायें जैसा कि प्रायः अभी तक होता रहा है और उससे वह नाजायज तौर पर फायदा उठावें जो कि उनके अधिकार से भी ज्यादा होता है, और दूसरी चीज यह भी नहीं होनी चाहिए कि जिस व्यक्ति ने स्वयं परिश्रम करके किसी नई चीज की ईजाद की है इसका लाभ उसको न मिले और सरकार उसको उस अधिकार से वंचित करके खुद उस को प्रयोग में लावे। मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि पेटेंट कानून में जो संशोधन होने जा रहा है उसमें उन दोनों एक्स्ट्रीम साइड्स के बीच का रास्ता निकाला जाये।

मुझे इस बात का खेद है कि जिन चीजों पर विशेष रूप से इस पेटेंट बिल द्वारा असर पड़ता है वे औषधियां या खाद्य पदार्थ हैं। इस मामले में हमारी सरकार की नीति मे कोई परिवर्तन नहीं आया है जो होना चाहिए। मैं इस बात को कई बार इस सदन में कह चुका हूं कि हमारे यहां जो निर्धन नागरिक हैं—जिनका देश में बहुत बड़ा बहुमत है—उनको इन औषधियों का कोई लाभ नहीं मिल पाता जो कि एलोपैथी द्वारा ज्यादा कीमत पर दी जाती हैं। मैं यह सुझाव देता हूं कि ऐसा प्रयास होना चाहिए कि जो औषधियां हमारे देश में बनें उन के बारे में प्रयोगशालाओं में एक्सपैरीमेंट किए जायें और इस बात की कोशिश हो कि वे औषधियां कम से कम दाम में बनें और ऐसे पेटेंट लाज हों कि जिनमें इस बात का ध्यान रखा जाये कि इन औषधियों का बाजारी मूल्य कम हो। इस तरफ खास तौर से ध्यान देना चाहिए। और यह तभी सम्भव होगा जब हमारे देश में स्वयं इस

प्रकार की दवायें बनें और उन औषधियों का, जिनका सरकार पेटेंट दे, उनका प्रचार अधिक किया जाये ।

एक बात मुझे इस विषय में और कहनी है । कल दंडेकर जी ने यह सुझाव दिया कि जहां तक जुडीशियल मामला है, यानी इस में जो केन्द्रीय सरकार को अपील करने का अधिकार दिया गया है, वह उचित नहीं है । मैं स्वयं यह समझता हूं कि जिन मामलों में नागरिक के सिविल अधिकारों का प्रश्न हो—पेटेंट राइट्स भी सिविल राइट्स हैं—जिन पर उसके मेनटिनेन्स का प्रश्न है, उन में न्याय पाने के लिए व्यक्ति को उच्च न्यायालय तक जाने की आज्ञा होनी चाहिए, ऐसा होने पर ही ठीक न्याय हो सकता है । इसलिए इस चीज का भी इसमें प्रावीजन होना चाहिए । प्रायः यह देखा गया है कि जहां केन्द्रीय सरकार को नागरिकों के अधिकारों के मामले में इस प्रकार के अपील के अधिकार दिये जाते हैं उसमें नागरिक को वह संतोष नहीं होता जो कि उसको हाईकोर्ट या सुप्रीम कोर्ट जाने से होता है ।

एक बात मुझे यह कहनी है कि 1911 के बाद इतनी खोज के बाद यह संशोधन लाया गया है, लेकिन फिर भी इसमें उन बुनियादी चीजों पर गौर नहीं किया गया जिनका मैं ने अभी जिक्र किया है कि किसी व्यक्ति को जो ईजाद करे उसकी मानापली या बपौती नहीं मिलनी चाहिए ताकि वह उसके आधार पर शोषण कर सके । मैं तो समझता हूं कि जहां तक विदेशियों का सम्बन्ध है, उनको जो सुविधायें पेटेंट कानून के द्वारा दी जाती हैं और वे उसके आधार पर हमारे देश में व्यवसाय करते हैं, इस पर अवश्य कुछ प्रतिबन्ध लगना चाहिए, उनको पेटेंट के अधिकार सीमित समय तक के लिए होने चाहिए । और उस सीमित समय के अन्दर हम उन सब चीजों को स्वयं अपने यहां पर बनायें ताकि आगे उसका लाभ विदेशों में न जाये । इस तरफ सरकार का ध्यान होना चाहिए और इस दिशा में उसे कदम उठाने चाहिए । विशेष कर उस सरकार का यह दृष्टिकोण होना चाहिए जो देश में समाजवादी आर्थिक व्यवस्था लाना चाहती है कि देश की कमाई और देश की मेहनत का लाभ बाहर इस प्रकार न जाये, और उसके जाने की जितनी भी नालियां है उन पर प्रतिबन्ध हो ।

एक मेरा सुझाव इस विषय में और है । यह विधेयक ज्वाइंट कमेटी में जा रहा है । वहां इस विषय पर विशेष तौर पर ध्यान देना चाहिए कि इस कानून द्वारा ऐसा न हो कि किसी व्यक्ति को पेटेंट का लाभ इस प्रकार दिया जाये कि वह सदैव के लिए लाभान्वित होता रहे, लेकिन सरकार चाहिए कि या तो उस अधिकार का राष्ट्रीयकरण कर दे या उस काम को सरकार स्वयं ले ले जिससे जनता को ज्यादा लाभ पहुंचे । इस ओर ज्वाइंट कमेटी को ध्यान देना चाहिए ।

और मैं यह भी समझता हूं कि सभी चीजें जो ईजाद करते हैं, जो उपयोगी हैं, चाहे वे औषधियों के रूप में हों चाहे वे खाद्यान्न के रूप में हो, उनको तो सरकार को अपने हाथ में लेना चाहिए और ऐसे व्यक्ति को लम्प सम में मुआवजा दे दिया जाये । सरकार को स्वयं ऐसी औषधियों और खाद्यान्न के मामले में कदम उठा कर उन सभी चीजों को अपनाना चाहिए ।

जब जमींदारी उन्मूलन कानून बना तो बड़ी बड़ी इम्मूवेबिल जायदादों का कम्पेन्सेशन दिया गया, वह समय के आधार पर दिया गया । इसी प्रकार जो नई चीजों की ईजाद करते हैं उनको भी लम्प सम मुआवजा दिया जाने का विधान होना चाहिए । लेकिन अगर उन्हीं लोगों द्वारा इन चीजों का बनाना जारी रहेगा जो विदेशों से औषधियां मंगा कर यहां औषधियां आदि बनाते हैं तो

[श्री गौरी शंकर कक्कड़]

इससे अवश्य हमारे देश का शोषण होगा और ऐसे सरकार कभी भी समाजवादी व्यवस्था नहीं ला सकती । हमारा क़दम इस प्रकार उठना चाहिए कि हम आत्मनिर्भर हों चाहे वह दवाई का मामला हो चाहे खाद्यान्न का मामला हो और सरकार को यह भी देखना है कि 17-18 साल से स्वतंत्र होने के बाद जो प्रणाली चल रही है जो चीजें इस प्रकार की पेटेंट लाज़ के हिसाब से चल रही हैं उन के कितने अनुपात पर हमारा अधिकार हुआ और कितने अनुपात में हम ने खुद उन को यहां पर बनाना आरम्भ किया मुझे बड़ा दुःख है अगर इस प्रकार के इतिहास के पुराने पन्ने उलटे जायं तो हम इस नतीजे पर पहुंचेंगे कि हम ने कोई प्रगति नहीं की है । इसलिए अन्त में मुझे यह सुझाव देना है कि पेटेंट बिल के संशोधन पर जब भी विचार किया जाय तो इस आधार पर विचार आवश्यक हो कि ऐसी जो औषधियां हैं जिनका बड़ा लाभ है और ज्यादातर इस्तेमाल होती हैं और इसी प्रकार से जो खाद्यान्न की वस्तुएं हैं उन पर जो भी ईजाद हुई है पेटेंट का लाभ दिया गया है वह सरकार अपने हाथ में लेकर और उन को दूसरी तौर पर कम्पेंसेट कर के चलाये ताकि हमारे ही देश में उन चीजों का बनना आरम्भ हो और जब ऐसा होगा तभी इस से लाभ हो सकता है और तभी सही मायनों में यह कहा जा सकता है कि हम विदेशों की बड़ी बड़ी फ़र्मों द्वारा जो शोषण होता है उस को हम रोक सकते हैं । लेकिन अगर इस प्रकार की चीज नहीं हुई और यह साधारण विधेयक इसी रूप में स्वीकृत कर लिया गया तो इस से कभी भी इस प्रकार की विदेशों में जो लाखों रुपये की मुद्रा हमारे यहां से जाती है उस पर कोई रोकथाम होती दिखाई नहीं पड़ेगी ।

Dr. M. S. Aney (Nagpur): I only want to make a few observations on this Bill which is to be referred to a Joint Committee. My attempt will be to say something that may be of use or guidance to the Joint Committee in discussing this Bill and preparing their report.

As has been stated in the Statement of Objects and Reasons, the present Act has failed in certain respects in achieving its main object. Though the old Act has been there on the statute-book for a long time, it has failed in certain respects. Now, what are the directions in which it has failed? We find from the Statement of Objects and Reasons:

> "Although the Act has been in in force for a very long period, it has not achieved its main purpose of stimulating inventions among Indians and encouraging the development and exploitation of new inventions for industrial progress in this country.".

This is the first test. While looking at this Bill, the test which the Members of the Joint Committee should apply is this, namely how far the new provisions introduced in this Bill are calculated to serve these objects which the old Act has failed to achieve, namely whether they are likely to stimulate inventions among Indians and secondly whether they encourage the development and exploitation of new inventions for the industrial progress of the country. It has been admitted that among those who are patentees under the existing conditions, nearly 90 per cent are foreigners. If patents in India are to be of advantage to the patentees then it is patent now from this very figure that the advantage has gone to the foreigners and not to persons of this country. The first attempt, therefore, should be to find out how for the present Bill differs from the old Act in discouraging foreigners to get patent and encouraging Indians to take patents here. That should be the main line along which the examination of the provisions of the Bill should be made.

Having said that, I turn to the second test which has been mentioned here. It has been stated that this

Bill is the result of several inquiries and reports submitted by those persons who made the inquiries. The main report is the one presented by Shri N. Rajagopala Ayyangar. It is state that this Bill is based mainly on the recommendations contained in that comprehensive report. So I would particularly request the members of the Joint Committee to see in what respects the present Bill differs from the recommendations made in that report, and whether there are any good grounds for believing that these recommendations which are embodied here and which constitute a departure from those recommendations are in effect more encouraging in the directions to which reference has been made in the statement of objects and reasons. That should be another check.

I find from a statement supplied to me by one of those who are engaged in this business that there are several points in which the recommendaions of the Ayyangar Committee have been departed from in the Bill. The memorandum tries to make out that these departures are not necessarily to the advantage of Indian inventors at all. That is another point I wish to bring to the notice of the Joint Committee.

Then there is another thing. It is admitted here that many times it has been found that a patentee has so worked his patent right that ultimately it has operated to the prejudice of people here. Whether this aspect has been taken care of in the provisions of the Bill should be examined. The provisions dealing with that aspect should be carefully examined and, if found necessary, rectified. Of course, the powers of the Controller and the period of validity of patents—all these are matters relevant to the consideration of this aspect of the matter.

As regards the period of validity of patents, it is fixed as 10 years under cl. 53. This has been shown to be very inadequate for the patentee to make the most of the patent. I do not want to go into details because, in the first place, I am not a businessman and have not dealt with this matter. This is the first time that I have received a representation on this point. So I do not rely upon that complaint also. But I would request the Committee to carefully examine those things from the practical point of view rather than go merely on theoretical considerations. The criterion should be: are India's interests going to be furthered by the provisions now contemplated or are we going to continue under the old conditions under the same provisions, the spirit remaining the same though the words and clauses may be different? If the Committee did something in that direction, I believe it would be doing a great service to the country, because we are entering upon an industrial age. After all, the future of India will depend upon how our industries are encouraged and how they will prosper. In this connection, the encouragement given by Government in that direction constitute the most vital element in that progress. Our future depends upon our industrial as well as agricultural prosperity. So this is one of the essential weapons in the hands of government to encourage Indian industry in an indigenous way so that our inventors and research workers receive encouragement and not the foreigners. I hope the Members of the Joint Commission will go into this aspect in all its details and see how far the Bill meets that requirement. If they do that, I am sure they will come to the right conclusions and their report will be of great advantage to the House and the country.

Shri D. C. Sharma (Gurdaspur): As one goes through this Bill, one feels a great deal of happiness and also a great deal of elation. Though one feels that this Bill should have been brought in earlier, it is good that we are having it in the year 1965.

Of course, this Bill has gone through the usual kinds of processes to which all Bills are subjected. There are amending Bills, there are inquiry committees, there are departmental committees; there are committees which may be called inter-ministerial committees. This Bill has also been through all those committees and we

[Shri D. C. Sharma]

have here the results of the joint deliberations of those bodies. But what will you think of a Bill brought before this House by a Ministry which has a corrigenda consisting of 7 pages? Who is reponsible for those mistakes? Who has dealt with that matter? Who has been liable to make all these errors of spellings, punctuation and other things? I think this Bill shows what kind of slackness has crept into the working of our Ministries. Shri T. N. Singh, who was himself a proof reader at one time, and who has managed and published a newspaper at one time, has not been able to see to it that such things do not make the beauty of a Bill from which free India expects a great deal. I hope this remark of mine will be taken into account when Bills are brought before this House in future. We are tired of these corrigenda. We are fed up with these correction slips which say that 'we have made a mistake here and a mistake there. I think if this kind of thing creeps into a book and it is presented to the department of Education in any part of India, it will be thrown into the waste paper basket. But here we Members of Parliament are being treated to a kind of feast of mistakes.

Shri Sheo Narain (Bansi): Members are here to correct the law.

Shri D. C. Sharma: You have not yet passed your law examination. After having attempted so many times, you were lucky to have passed the B.A. examination. When you pass your law examination you can do whatever you like.

One thing that makes me happy is this. We want to achieve the purpose of stimulating inventions. This makes my heart glad. There are two countries in the world where inventors are respected and honoured and where everyone tries to improve upon what exists. My country, unfortunately, is a country of traditionalism and experiment, 99 per cent traditionalism and 1 per cent experiment. But I believe that if this Bill is implemented in the right way, my country will also have inventors all along the line, inventors in every field of human endeavour, inventors who can change the face of this country. I want a Luther Burbank who can change the face of agriculture here. I want an Edison in this country who can give us mechanical inventions, I want some other types of inventors in this country who can make us do better things in a better way and in a very short time. But how are we going to do that? Is the Controller of this organisation going to stimulate inventions? Will the Controller be able to pick up the inventive talent in this country? Shall we be able to give a fillip to this kind of talent in this country? Certainly not. I think the only thing we can do is to protect them whenever some invention has been made or some inventor as come in the field. I want to know from the hon. Minister, who himself is an inventor of many things. . .

Shri T. N. Singh: No.

Shri D. C. Sharma: . . .what efforts he is going to make in order to stimulate invention. There should have been something in this Bill to make inventions a profitable, a lucrative, an honoured and respected profession in this country.

In the Ministry of Education we have instituted something which is called the Search for Scientific Talent. I am very happy about it. Of course that search for scientific talent has come to be equated with an examination in science, and as a result of that examination, we pick up the scientific talent in this country. Well, something is better than nothing, but I want to know how these inventions are going to be stimulated. I know that you will encourage development and exploitation of these inventions, I know that purpose is there in this Bill, but there is nothing, as I said, in this Bill which will encourage people to invent. Therefore, I would say it is not a Patents Bill which encourages people to invent things. I think the the Patents Bill will act as a damper on this inventive skill of people, the Patents Bill will be a kind of dust

which smothers the fire of invention in people.

An Hon. Member: Question.

Shri D. C. Sharma: It is a question which need not be answered because the questioner does not know what I am talking about.

So, some provision should be made in this Bill, some money out of the fund which will accrue as a result of the working of this Bill should be set apart for discovering new inventive talent in this country, as we are trying to find out new scientific talent in this country.

How is it that we are using the same razor blade in the villages which my grandfather used. Of course, I love that blade, that cut-throat kind of blade, and I wish I could cut the throats of some of my friends, not here but elsewhere, but still I love that cut-throat kind of razor, but I ask you a question. Have we been able to do anything? The same old plough, the same old harrow, though the toads are now different under the harrow. Therefore, I would say that there should be a definite provision in this Bill to encourage the discovery of new, young, youthful, inventive talent in this country, and some part of the fund that accrues to Government from this Bill should be set apart for this purpose. How should this be done? The Government of India is not so meagre in thinking power that it cannot find ways and means to do that.

It has been said that this Bill will apply to food. What kind of food, I ask you. According to the definition clause,

> "'food' means any substance intended for the use of, or capable of being used by, babies, invalids or convalescents as an article of food or drink. . ."

I ask you one question. What are those foods which are used for babies in this country, what are those foods which are used by invalids in this country, what are those foods which are used by convalescents in this country? I do not think our country has produced any kind of food excepting the quack kind of food, about which I see so many advertisements in the papers. In all these different categories of food, our country has been deficient, and we are going only to do this, that we take the patent from some other country and make it our own, or give the rights of patent to some kind of food which is sub-standard or below the normal standard or below the nutritive value which we require of it. I do not know what is going to happen in this country. At least I need food of this kind sometimes, and so do other people, but where are these foods? What are we going to do to produce this kind of food for babies, invalids and convalescents. You will say we have the Glaxo and other things. What are they? They are only cheap imitations of the kind of food which are available in other countries. You have got to relate the food which is going to be patented under this law to the conditions, to the environments, to the climate and to the pockets of the countrymen of this free India.

Shri Shinkre (Marmagoa): Which part of the country? We have various climates?

Shri D. C. Sharma: The whole of India. If you do so, I think this Clause will become real, but if you do not do so, I am sure that this will be having a kind of fictitious worth.

Then it says:

> "'invention' means any new and useful—
>
> (i) art, process, method or manner of manufacture. . ."

I think the only kind of art, process, method or manner of manufacture we have discovered so far in this country

[Shri D. C. Sharma]

—and that also I doubt if it is our own—is the art, process, method or manufacture of soaps. I see such glittering advertisements about all kinds of soap in the papers. I think the only thing where our manufacturing process has succeeded, whether on account of indigenous efforts or on account of the efforts of other countries, is the manufacture of soap. Sometimes I also read about different kinds of creams, but I wonder whether these creams belong to our country, or they have come from some other country.

What are the processes of manufacture which we are going to stimulate? We want to manufacture tanks, we want to manufacture supersonic aeroplanes, we want to manufacture new kinds of ploughs and harrows. How are we going to patent the art and process and method of manufacturing all these things, machines, apparatuses and other articles?

I used to feel very happy when I was told that we were manufacturing bicycles, when I was told that we were manufacturing scooters. My heart jumped with delight when I was told that we were manufacturing sewing machines. If you look at the reality of these things you will find that most of these things are assembled here. I know of some cycle-manufacturing factories; they are big names in the trade. But they are merely assembly plants. When we put questions on the floor of the House and ask what is the indigenous content in them, it is said '80 per cent'. If you compute the price of that 80 per cent and compare it with the price of the 20 per cent which is imported, you will find that the price of the imported component is very very high and the price of what we manufacture here which is called the indigenous content is very very low. Therefore, so far as these machines are concerned I think we may be making some headway, but we have not made much headway.

And then medicines and drugs. I shiver with fear when I find that they are going to patent medicines and drugs. Of course, if something is manufacured by the Antibiotic Factory, Pimpri I do not mind that; but I know what is happening in the field of drugs. The USA is thought to be a great country—and it is a great country—and some years back there was an exhibition held by the great doctors of USA in New York. And along with that exhibition there was another exhibition by 'doctors' who had no medical degrees and whom I can call as quacks. Sir, more people went to the exhibition arranged by these quacks than to the exhibition arranged by the highly-qualified doctors with high degrees from great universities of the world and great universities of USA. We are talking of X-rays, but if the Minister for Industries had gone there and seen that exhibition arranged by these great doctors, he would have come across something which is greater than X-ray, namely the Z-ray.

An Hon. Member: Death-ray?

Shri D. C. Sharma: Z ray—A, B, C, D . . . Z. If you do not know the alphabet, what can I do?

Sir, what I was submitting was that we have to proceed very cautiously about patenting medicines and about patenting drugs. Already the market is flooded with these things, and I hope that these patents will be granted with the utmost care. Of course, the words "medicine" and "drug" have been defined with the utmost care that the Ministry can bestow upon the definition of anything. But I would like to suggest to the hon. Minister that there must be provision in it not only for drugs and medicines which are used by allopathic doctors. There should be at least four categories of medicines and drugs, and we have got to take care of those categories: medicines and drugs which are of use to

allopathic doctors, medicines and drugs which are of use to homoeopathic doctors, medicines and drugs which are of use to naturopaths . .

Shri U. M. Trivedi (Mandsaur): They have no drugs.

Shri D. C. Sharma: They have also. You have not undergone that treatment as I have undergone.

And then medicines and drugs which are of use to ayurvedic practitioners or unani practitioners. We should not lump all these together. We are killing the initiative of the people by going whole hog in favour of modern medicine. George Bernard Shaw said that modern medicine is a quackery of the highest order, and I believe to some extent in that. But I believe that these four categories must be defined, and you must make provision for them so that our people who can invent certain things in the ayurvedic field or the unani field or the homoeopathic field also can have the benefit of this.

Sir, one more point and I have done. And it is about this Controller. We are creating new empires in this country. We tried to do away with the five hundred and odd States in India created by the British Empire. But now we are creating new empires, new States, new kingdoms; and I can tell you that the Controller under this Patents Act is going to be not a Raja of a small State but a Maharaja of a big State. (*An Hon. Member*: An Emperor). He has been given all kinds of powers, civil powers and all kinds of powers. I would say that absolute power corrupts people absolutely, and I would request the hon. Minister—who, thank God, has started now yielding some kind of power—that he should see to it that the powers of this Controller are truly minimised and that he is not given legislative powers, registration powers, punitive powers, judicial powers, and all these kinds of powers. I think you cannot find a human being who can exercise all these powers. Where is that human being? You will have to find some avatar to be able to exercise all these powers judiciously. The days of rishis and avatars have gone. Therefore you cannot have a controller, a big-bellied controller, who will one day sit as a judge, another day sit as a registrar, the third day sit as an assessor of inventions, the fourth day sit in some other capacity. I have known of gods who have got two faces, I have known of gods who have three faces, but this Controller is going to be a many-faced god. Sir, I dread to think of a many faced god. I would therefore say that the Ministry should see to it that the powers of civil court which have been given to this Controller are withdrawn from him, because I know the Controller is so much blessed with powers that he will not be able to exercise those civil-court powers judiciously in the best interests of the country.

डा० राम मनोहर लोहिया (फर्रुखाबाद): अध्यक्ष महोदय, हमारे देश में हर बहस एक दोष से बाहर हो जाती है कि यह पूंजीपतियों का मामला है या नौकरशाही का मामला है, इससे फायदा कुछ पैसे वालों का हो सकता है या नही या इससे फायदा राज्य को या राज्य के उन लोगों को हो सकता है जिन को सार्वजनिक कहा जाता है। इस लिये मैं समझता हूं कि यह बहस कुछ बेमौजूं हो जाती है इसलिये कि घोड़े का मालिक कौन है। इसका फैसला तो तभी हो सकता है जब कि घोड़ा हो। मुझे इस पेटेंट के मामले में पहली शिकायत तो यह करनी है कि हिन्दुस्तान पिछले अट्ठारह वर्षों में आविष्कारों और वैज्ञानिक खोज के मामले में बहुत ही कमजोर रहा है, शायद दुनिया में सब से ज्यादा कमजोर। इसलिये इसको तीन दृष्टियों से देखना है। एक तो आविष्कार की दृष्टि से, दूसरे आविष्कारक की दृष्टि से या खोज करने वाले की दृष्टि से और तीसरे विदेशियों की दृष्टि से। मैं तीसरी दृष्टि अर्थात् विदेशियों को सब से पहले लेता हूं।

[डा० राम मनोहर लोहिया]

मैं पक्का तो नहीं कह सकता हूं लेकिन इस वक्त जो चीजें हम देश में पैदा कर रहे हैं, तैयार कर रहे हैं कारखानों में, उन में शायद 10 से 15 सैकड़ा जो कुछ भी दाम हमें देना पड़ता है उस का, यह पेटेंट अधिकार के रूप में ही विदेशों को चला जाता है। तो पहली कसौटी तो मेरी यह है कि जिस किसी भी कानून से परदेशियों को इतना ज्यादा पैसा जाता है उसे यह कानून खत्म करता है या नहीं। इस सम्बन्ध में फर्क करने के लिये एक तो नाम के पेटेंट के बारे में और दूसरे तरीके के पेटेंट के बारे में मैं कहना चाहता हूं। नाम का पेटेंट तो बेमतलब चीज है। क्या रक्खा है उस में। नाम के लिये इतना पैसा क्यों दिया जाता है। वैसे मैं निजी अनुभव आपको बतलाऊं। एक बार एक हिन्दुस्तान के करोड़पति बाइसिकिल बनाने वाले थे। उन्होंने सोचा कि वह उसका नाम इंडिया रक्खेंगे। तब गांधी जी जिन्दा थे। वहां उन से मेरी मुलाकात हो जाया करती थी। मैंने उन से कहा कि "इंडिया" नाम न रखना। "हिन्द" रखना। उसका नाम "हिन्द" रक्खा गया। लेकिन अभी तक मुझे उन्होंने इसके लिये कोई पैसा नहीं दिया। कम से कम 50 या 60 हजार रुपया मुझे मिलना चाहिए था क्योंकि मैंने "हिन्द" नाम बतलाया था। उन के नाम से कोई मतलब नहीं है लेकिन साइकिल का नाम बतलाने पर भी उन्होंने मुझे पेटेंट का पैसा नहीं दिया। यह मैं मंत्री महोदय को बतलाना चाहता हूं। उनके वह बहुत बड़े दोस्त हैं।

जो पेटेंट के तरीके हैं उन के बारे में मुझे सब से बड़ी बात यह कहनी है कि हम खोज के मामले में इतने ज्यादा गरीब हैं जिसका कोई ठिकाना नहीं है। मैं एक मिश्री की मिसाल दिये देता हूं। अभी तक हम लोग चीनी से मिश्री भी ठीक तरह से तैयार नहीं कर पाए। परदेश में मैंने सुना है कि चीनी से मिश्री बनाने में मुश्किल से 5 या 6 सैकड़े का नुकसान होता है। यहां पर अभी हम यह सिलसिला भी नहीं ढूंढ पाए जिस से 10 सैकड़े से कम हम नुकसान कर सकें। 10 से 15 सैकड़ा क्या चीज है। कहां गड़बड़ हो जाती है, क्यों हम इसकी खोज नहीं कर पाए हैं। मैं आपको एक किताब का वाक्य पढ़ कर सुना देता हूं। वह किताब संसार के वैज्ञानिक मामलों की खोज के लिए मशहूर किताब है पामर पुटनम की लिखी हुई और उसका नाम है "एनर्जी इन दि फ्यूचर"। जो मंत्री विज्ञान से सम्बन्ध रखते हैं वे इस किताब को जरूर पढ़ लें। उस में एक वाक्य है :

"A 5,000 a month production rate of low cost of solar cookers was inaugurated at Bombay on May 27, 1953 by Shri K. D. Malaria ....".

इस में श्री के० डी० मलेरिया लिखा है।

"by Shri K. D. Malaria, Deputy Minister for Natural Resources and Scientific Research."

मैं जानता नहीं, लेकिन मलेरिया साहब शायद मालवीय साहब होंगे। तो मई 27, 1953 में सूरज के चूल्हों का उद्घाटन हो गया था। अब इस बात को बारह वर्ष हो गये। सारे संसार में उस वक्त इस की डुग्गी पीटी गई थी और वह 5,000 प्रति मास के हिसाब से तैयार होने वाला था। मैं समझता हूं कि उसका भी कोई पेटेंट तो रहा होगा न, मंत्री महोदय।

श्री त्रि० ना० सिंह : आप ज्यादा जानते होंगे।

डा० राम मनोहर लोहिया : यह सही है। मैं ने हर मंत्री को यह कहते सुना है कि दूसरे लोग ज्यादा जानते हैं। लेकिन कभी आप खुद भी तो जाना करो।

तो 5,000 एक महीने में तैयार होने वाले थे। इस का पेटेंट रहा होगा । लेकिन यह नहीं हो पाया । मैं चाहता हूं कि कानून के अन्दर कोई ऐसा हिस्सा भी हो जिससे कि सरकार के मंत्री और अभी शर्मा साहब बोल रहे थे तो नाम ले रहे थे कंट्रोलर वगैरह या नौकरशाहों का, जो पेटेंट के मामले में वैज्ञानिक खोज के मामले में इतना खर्च करते हैं और ऐसी चीजों का ऐलान करते हैं, अगर वह चीजें पूरी न हों तो उन्हें सजा मिले। जहां प्रलोभन की बात कही जाती है वहां मैं समझता हूं कि गलेरिया साहब को सजा भी मिलनी चाहिए और मलेरिया साहब से जो बड़े लोग हैं उन को सजा मिले या फिर उनकी जगह जो साहब आयें उनको सजा मिलनी चाहिए। क्योंकि आखिर यह तो गद्दी है । इसलिए सजा जरूर मिलनी चाहिये ।

श्री बी० चं० शर्मा : उनको काफी सजा मिल चुकी है ।

डा० राम मनोहर लोहिया : कहां मिल चुकी है । देखो, मैं गद्दी की बात कर रहा हूं शर्मा साहब गद्दी को सजा मिलनी चाहिये क्योंकि जो पैसा खर्च होता है एक माने में तो वह कुछ नहीं है लेकिन हमारे अपने देश के हिसाब से हम एक अरब रुपये वैज्ञानिक खोजों के लिए सरकार की तरफ से खर्च कर रहे हैं । पूंजीपतियों की बात छोड़ दीजिये । मैंने सुना है कि कल स्वतन्त्र पार्टी के श्री डांडेकर ने कुछ चर्चा यहां पर पूंजीपतियों की खोज की थी । अरे, पूंजीपति क्या खाक पत्थर खर्च करता होगा। ज्यादा से ज्यादा दस बीस करोड़ रुपया खर्च करता होगा । लेकिन सरकार 1 अरब 60 करोड़ तक खर्च कर रही है अणु खोज में और 40 करोड़ खर्च कर रही है और साधारण खोज में । यह एक अरब रुपये की खोज का क्या परिणाम निकला करता है वह भी एक कसौटी है और इस कसौटी का इस्तेमाल मैं जहां तक समझता हूं इस कानून पर होते हुए भी, इस कानून के बनाते हुए भी कहीं कुछ नहीं हुआ है और मैं इस कसौटी का इस्तेमाल कराना चाहता हूं । कहीं कोई तरीका निकाले । खुद मंत्री महोदय सोचें, नौकरशाह लोग सोचें, किसको सजा मिले, कहां क्या हो, यह अपना ढूंढ ढांड लें । लेकिन हिन्दुस्तान में क्यों खोज नहीं हो पा रही है, चीनी से मिश्री तक नहीं बन पा रही है, सूरज से चूल्हा नहीं बन पा रहा है, साधारण से साधारण बातों के बारे में मैंने तलाश किया था फिर एक अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक ने बताया कि एक साधारण चीज में तुम्हारे यहां के वैज्ञानिक भूल कर गये कि सूरज की गरमी से सूरज का चूल्हा अगर बनाने जाओगे तो निहायत निकम्मी चीज होगी, कोई मतलब नहीं रखेगी क्योंकि सूरज में इतनी गरमी नहीं है । लेकिन सूरज का जो रासायनिक पदार्थ है, अब क्या जानें पौधों में जो क्लोरोफिल होता है, उसमें जो उसका अंश है वह अगर ले सकें तो यह बहुत जबरदस्त शक्ति हो सकेगी । यह बहुत साधारण बात थी । लेकिन इस साधारण बात में भी वैज्ञानिक लोग फिसल जाया करते हैं । उसका एक कारण यह भी रहता है कि यहां जो मन्त्री वगैरह हैं, वह सच्ची बातें कुछ जानते नहीं, कुछ मेहनत नहीं करते, कोशिश नहीं करते जानने की । अगर वह जानें तो कम से कम कुछ दिशाओं को तो बता सकें वैज्ञानिकों को ।

इसलिये आविष्कार और वैज्ञानिक खोज के सम्बन्ध में मैं जोर से कहना चाहता हूं कि एक नये सिरे से सोच यहां पर होना चाहिये । 18 वर्ष बहुत खराब बीते हैं। दुनिया कहां चली गई है वैज्ञानिक खोज के मामले में । अभी, खैर, अणु बम वगैरह की तो मैं बात नहीं करता, अणु विस्फोट

[डा० राम मनोहर लोहिया]

के बारे में बहुत सी चर्चा चल रही है। हो सकता है कि जिसको अमरीकी लोग कहते हैं प्रोजैक्ट प्लाऊ सेयर या प्रोजैक्ट . . . इसका एक और नाम भी रखा है . . .

श्री बि० ना० सिंह : आगे बढ़िये ।

डा० राम मनोहर लोहिया : बस, यही कहोगे कि आगे बढ़िये । तुम तो पीछे बढ़ोगे और हम आगे बढ़ेंगे ।

तो खैर, देखो, याद आ गया—प्रोजैक्ट नोम भी कहते हैं । नोम और प्रोजैक्ट प्लाऊ शेयर । उसमें अणु का विस्फोट शान्तिपूर्ण कामों के लिए हुआ करता है, ऐसा कहते हैं । यह बात अलग है कि वह विस्फोट कभी भी किसी और काम के लिए इस्तेमाल हो सकता है । ऐसा लगता है कि प्रोजैक्ट प्लाऊ शेयर या प्रोजेक्ट नोम किसी न किसी रूप में हमारे देश में आ रहा होगा । लेकिन वहां पर भी गड़बड़ यह हो जाया करती है, जो अभी शर्मा जी ने बताया कि एक कोई कंट्रोलर हो जाया करता है, महाराजा बन जाता है । तो वहां इतनी सब खराबी आ गई है, कि कोई मंत्री बन जाता है, कोई चेयरमैन बन जाता है । मैंने अणु शक्ति में तो यह सुना है कि जो चेयरमैन है वही उस महकमे का सचिव भी है । नतीजा यह होता है कि खोज करने का काम और प्रशासन का काम दोनों एक ही आदमी में जुड़ जाने के कारण कहीं किसी तरह की निगरानी नहीं हो पाती और जो सारा मामला आज हिन्दुस्तान के प्रशासन का हो गया है—हुनर को रखने वाले, काम को जानने वाले, उनकी तो कोई कदर है नहीं, कदर किसकी है ? जो आई० ए० एस० वगैरह हो गया हो, किसी प्रशासन में चला गया हो । यह सारी दृष्टि बदलनी चाहिये । कदर उसकी हो जो हुनर वाला हो, जो किसी काम को करना जानता हो और यह तभी हो सकता है जब हमारे देश में कुछ थोड़ा सा अनादर सीखें । आदर आदर सीखते सीखते सब मामला खराब हो गया । हिन्दुस्तान के विश्वविद्यालयों में भी आदर, पुरानी विद्या का आदर, जो कुछ पुरानी चीज है उसकी इज्जत इतनी जबर्दस्त करो कि पुरानी चीज भी अच्छी तरह से नहीं आ पावे, मुझे यह जोर से कहना है कि जब तक हिन्दुस्तान का वैज्ञानिक पुरानी विद्या को पढ़कर के उसका अनादर करना नहीं सीखेगा तब तक वह नयी विद्या का आविष्कार कर नहीं सकत । इसलिये आदर की इतनी जबर्दस्त बातें करते रहना और उसी की नकल करते रहना, इसमें कहीं खोज खाज हो नहीं पायेगी और जब मैं अनादर की बात कहता हूं और विश्वविद्यालयों को लेकर के तो घुमा-फिरा करके सवाल आ जाता है हमारी सारी व्यवस्था के ऊपर । यह व्यवस्था कैसी है । चापलूसी की व्यवस्था है, चुगलखोरी की व्यवस्था है । इसमें खोज कैसे हो पायेगी, मुझे कई एक वैज्ञानिक मिले । उन्होंने बताया कि हम कौन सी वैज्ञानिक खोज करके निकालें जब कि हमारी तरक्की इस आधार पर हो सकती है कि कौन किसका रिश्तेदार है, किसने किस की लड़की से शादी की है, कहां पर किस तरह से कैसा इन्तजाम है, जब ऐसी चीजों को लेकर के खोज के मामलों में तरक्की सोचते हैं तो सारा आधार ही बिगड़ जाया करता है ।

इसलिये वह जितने पेटेंट वगैरह के नियम और कानून हैं उन पर जब बहस चले तो हमें बुनियादी बात का ध्यान रखना चाहिये — यह बात सही है कि जो आविष्कारक हैं, या कोई बढ़िया बात कहते हैं, निकालते हैं, तो हालांकि मैं कोई बहुत ज्यादा पैसे का उपहार देने का समर्थक

नहीं हूं, लेकिन फिर भी अगर उसी चीज से लोगों को प्रसन्नता होती है तो ठीक है, पैसा उसको दो। यह एक हद् तक स्वीकार तो करना पड़ सकता है कि आविष्कारक को अपने आविष्कार के लिए उपहार दो। लेकिन मेरा अगर बश चले तो मैं पैसे की इज्जत इतनी सारी समाज में नहीं होने दूं और उसकी जगह रुतबा उसको दिलाऊं और रुतबे की इज्जत कराऊं। लेकिन वह तभी सम्भव हो सकता है जब यह सारे समाज का आधार रिश्ते-दारी वगैरह से हटा दिया जाय। इसलिये इस कानून पर बहस करते वक्त और इसको बाद में लागू करते वक्त मंत्री महोदय को इन चीजों के ऊपर ध्यान रखना है।

पहली बात यह है कि परदेशियों के अधिकारों और मुनाफों के ऊपर नियंत्रण करके हिन्दुस्तान में बनी चीजों का दाम घटाना चाहिये और नाम के लिए किसी तरह का पेटेंट नहीं होना चाहिये। केवल तरीकों के ऊपर और तरीकों के सम्बन्ध में मैं कह देना चाहता हूं कि वास्तव में कुछ तरीके तो ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय हो चुके हैं कि उनके पेटट की कोई जरूरत नहीं रहा करती है। उनको तो खुद ब खुद हम अपने यहां निकाल करके लागू कर सकते हैं। उनके लिए किसी पेटेंट प्राइस की जरूरत नहीं है और अगर मान लो, कुछ कम्पनियां ऐसी हैं, मैंने सुना है कुछ परदेशी कम्पनियां ऐसी हैं, जो अपने गन्दे पुराने विश्व-विख्यात प्रचलित पेटेंट अधिकारों के लिए भी पैसा ले लिया करती हैं यह धमकी दे कर कि तुम अगर पुराने के लिए नहीं दोगे तो हम नयी चीज नहीं भेजेंगे। तो मैं चाहूंगा कि ऐसी कम्पनियों को यहां से धता बताओ और नयी कम्पनियों के लिये नये आविष्कारों के लिए नयी खोज और तरीकों के लिए, हो सकता है कि और मुल्कों की तरफ जाओ। मैं नहीं जानता कौन से मुल्क इस समय ज्यादा अच्छे होगे। इस सम्बन्ध में मैं यह भी बता दूं कि शायद एक बड़ी जबर्दस्त गलती यह हो गई थी कि जर्मनी और जापान ये दो देश जब बिलकुल धूल में पड़े हुए थे सन् 45 और 46 में, अगर तब उनसे दोस्ती दिखाई गई होती तो शायद आज हम पेटेंट वगैरह के मामलों में कहीं और अच्छी जगह पर रहे होते। लेकिन जहां तक रूस और अमेरिका का मामला है, मैं इतना जरूर कह देना चाहता हूं कि मैने सुना है कि रूस वाले पेटेंट के मामलों में कुछ ज्यादा उदार हैं कहना बहुत एक मजबूती का वाक्य हो जायगा—कुछ ज्यादा उदार लगते हैं, वास्तव में हैं या नहीं यह मैं नहीं कह सकता, तो अमरीका वालों को भी अब इस बारे में कुछ फैसला करना चाहिये कि वह किस तरह की दुनियां बनाना चाहते हैं? क्या हिन्दुस्तान जैसे गरीब मुल्क मे पेटेंट के आविष्कारों और खोज के लिए रुपया लूट कर के वह अपनी दुनियां को बनाना चाहते हैं? तब तो वह दुनियां किसी न किसी दिन अणु विस्फोट से खत्म हो कर रहेगी। एक जमाना था जब अमेरिका वाले उदार दिल से अपने तरीकों और पेटेंटों को गरीब दुनिया में दिया करते थे। आज मैं अमरीका वालों से अपील करना चाहता हूं कि तुम फिर उसी दुनियां की तरफ आओ। हो सकता है कि रूस में नयी विचारधारा के कारण यह बात कुछ ज्यादा मौजूद है। एक बात तो है ही कि रूस का आदमी, चाहे उसको यह सिखाया जिस ढंग से भी गया हो, वह हिन्दुस्तान के आदमी या और किसी रंगीन आदमी के साथ ज्यादा मानवता का—अब मैं नहीं जानता कि वह असली मानवता है या दिखाऊ मानवता है—लेकिन ज्यादा मानवता का बर्ताव करता है। उसी तरह से अमरीका वालों को भी खोज के मामलों में अपनी नीतियों को बदलना पड़ेगा।

15.00 hrs.

उपाध्यक्ष महोदय : क्या माननीय सदस्य अभी इस पर बोलने के लिए और समय लेना चाहते हैं ?

डा० राम मनोहर लोहिया : जी हां आप की आज्ञा से मैं दो, चार मिनट और इस पर बोलना चाहूंगा। पांच एक मिनट में मैं अपनी बात पूरी कर दूंगा।

उपाध्यक्ष महोदय : चूंकि अब तीन बजे से दूसरा विषय लेना है इसलिये अब फिलहाल आप बंद करें। अगली बार माननीय सदस्य अपनी बात समाप्त कर लें।

15.01 hrs.

MOTION *RE*: ANNUAL REPORT OF LIFE INSURANCE CORPORATION OF INDIA

Dr. L. M. Singhvi (Jodhpur): I beg to move the following:

> "That this House takes note of the Annual Report of the Life Insurance Corporation of India for the year ended 31st March, 1964, along with the audited Accounts, laid on the Table of the House on the 18th February, 1965."

Mr. Deputy-Speaker, Sir, before I commence my observations, I would like to take emphatic exception to the absence of the hon. Finance Minister whose duty is really to come and reply to this debate. I had the privilege to initiate a discussion on the report and accounts of the LIC on the 5th September, 1963. When I initiated that discussion in it was the first time the LIC report was discussed on the floor of this House. At that time, Shri T. T. Krishnamachari, the hon. Finance Minister, who replied to the debate said that so far as LIC was concerned, he considered it a somewhat unpleasant subject and that he suffered from amnesia in respect of it. I would have thought that these 26 months which have elapsed would have enabled him to recover from his amnesia. His absence today appears to be an instance of selective inattention rather than of amensia; if he has recovered from his amnesia, as I hope the has, we would have expected him to be present here to listen to the debate and to reply to it.

Since I initiated the discussion last in 1963, in this House, we have received the report of the Committee on Public Undertakings which contains a wealth of information. This report furnishes its conclusions and recommendations which should serve as the basis for the discussion today in the House. If I am permitted to say so, the report of the Public Undertakings Committee on the LIC has confirmed each one of the conclusions I had put forward before this House in 1963, and has imparted to those views I had expressed in 1963 the stamp of its authority which is pre-eminent indeed.

Let us first take the volume of business. In 1959, the Corporation had drawn up a five-year plan for developing its business, and had fixed a target of Rs. 1,000 crores of business which was to be achieved by 1963. On the 6th August, 1959, the then Finance Minister had stated that reaching a figure of Rs. 1,000 crores in five years was a good ambition for the corporation, but he felt that this could even be bettered. Unfortunately, however, the target and the claim of the Finance Minister were to be wholly belied. In the year 1963-64 the target of Rs. 1,000 crores was hastily abandoned as unrealistic and was refixed at Rs. 750 crores. The target for 1964-65 has been fixed accordingly at Rs. 807.90 crores. I should like to invite the attention of this august House to the observations of the Committee on Public Undertakings on the manner in which these targets are fixed and what they leave to be desired. This is what the Committee say: